बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 69

स्वागत योग्य कदम

भारतीय खाद्य संरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) देर से ही सही लेकिन सक्रिय हो गया है। उसने राज्यों से कहा है कि वे विभिन्न ब्रांड के मसालों के पाउडर को परीक्षण के लिए एकत्रित करें। इससे पहले अप्रैल में सिंगापुर और हॉन्गकॉन्ग के खाद्य नियामकों ने खूब बिकने वाले भारतीय मसालों एमडीएच और एवरेस्ट पर प्रतिबंध लगा दिया। इन मसालों में कैंसरकारक कीटनाशक एथिलीन ऑक्साइड पाया गया था। भारत में इन मसालों की जांच के बाद हासिल नतीजों को एक विशेषज्ञ समिति के सामने पेश किया जाएगा और तकरीबन 25 दिनों में इसकी विस्तृत रिपोर्ट हासिल की जाएगी।

सरकार घरेलू और निर्यात बाजारों में बेचे जाने वाले मसालों में एथिलीन ऑक्साइड के इस्तेमाल के लिए दिशानिर्देश बनाने की प्रक्रिया में है। यह नियामकीय सक्रियता स्वागतयोग्य है लेकिन इसके साथ ही सक्रिय कदम उठाने की क्षमता को लेकर भी सवाल पैदा होते हैं। भारत को विदेशी बाजारों के नियामकों की शिकायत पर कदम उठाने में एक महीने से अधिक का समय लग गया। इस पर यकीनन सवाल उठेंगे। इसलिए भी कि भारतीय खाद्य निर्यात में घातक कीटनाशक मिलने का सिलसिला पुराना है। उदाहरण के लिए गत वर्ष भी अमेरिका ने एमडीएच के तीन मसालों को वापस कर दिया था क्योंकि उनमें साल्मोनेला बैक्टीरिया पाया गया था। इसके अलावा मीडिया में यह खबर भी आई थी कि कैसे भारत से गए बासमती चावल में कीटनाशक पाए जाने पर यूरोपीय संघ ने चेतावनी जारी की थी। ये घटनाएं दोहरा नुकसान पहुंचा सकती हैं। तात्कालिक रूप से यह देश के तेजी से बढ़ते मसाला निर्यात कारोबार पर बुरा असर डालेगा जो अब 4.25 अरब डॉलर का है और वैश्विक मसाला निर्यात में 12 फीसदी की हिस्सेदारी रखता है। ऐसे समय में जब प्रमुख विदेशी बाजार संरक्षणवादी रुख अपना रहे हैं, तब खाद्य संरक्षा से जुड़ी शिकायतों को लेकर धीमी और अस्पष्ट प्रतिक्रिया एक विरोधाभासी संकेत देती है। दूसरी बात जन स्वास्थ्य पर इसके असर से जुड़ी है। भारत जैसे देश में जहां स्वास्थ्य सेवाओं पर व्यय पहले ही कम है, यह बात बहुत मायने रखती है।

पैकेटबंद खाद्य और पेय पदार्थों में कीटनाशकों के अवशेष का खतरनाक स्तर पर पाया जाना एक ऐसा मुद्दा है जिसे सेंटर फॉर साइंस ऐंड एन्वॉयरनमेंट जैसे पर्यावरण और स्वास्थ्य सलाहकार समूह लगातार रेखांकित करते रहे हैं। वे बीते दो दशक से लगातार इस विषय में चेतावनी दे रहे हैं लेकिन नियामक की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं आई। हॉन्गकॉन्ग और सिंगापुर के खाद्य संरक्षा नियामकों ने हाल ही में जो प्रतिबंध लगाए हैं वह भी खतरों को रेखांकित करता है। उनकी जांच में एथिलीन ऑक्साइड का ऊंचा स्तर सामने आया जो खाद्य पदार्थों में नहीं होना चाहिए। दूसरे शब्दों में कहें तो खाद्य पदार्थों में इसकी मौजूदगी उन पदार्थों को इंसानों के खाने के लिए अनुपयुक्त बनाती है और लंबे समय तक इनका सेवन कैंसर की वजह बन सकता है। अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा इन दोनों मसालों को नकारे जाने के बावजूद एफएसएसएआई और वाणिज्य मंत्रालय के अधीन आने वाले मसाला बोर्ड ने कोई जल्दी नहीं दिखाई।

खाद्य पदार्थों के नियमन में अधिक सतर्कता बरतने की जरूरत है, बजाय कि मानक तय करने या उद्योग लॉबियों की मांग पर प्रतिक्रिया देने के। गत वर्ष पंजाब सरकार और चावल निर्यातकों ने यूरोपीय संघ द्वारा बासमती चावल के भंडार को नकारने की धमकी के बाद किसानों से मिलकर प्रतिबंधित कीटनाशकों का इस्तेमाल रुकवाया। हालांकि कीटनाशक निर्माताओं की राजनीतिक रूप से सशक्त लॉबी उनकी कोशिशों को धता बताने की कोशिश कर रही है। यह लॉबी मुनाफे को लोगों के स्वास्थ्य पर तरजीह देती है। ये ऐसे मसले हैं जिन्हें एफएसएसएआई को तत्काल हल करने की आवश्यकता है। भारतीयों का स्वास्थ्य तथा देश का बढ़ता खाद्य निर्यात उद्योग इसी पर निर्भर है।

बिनय सिन्हा

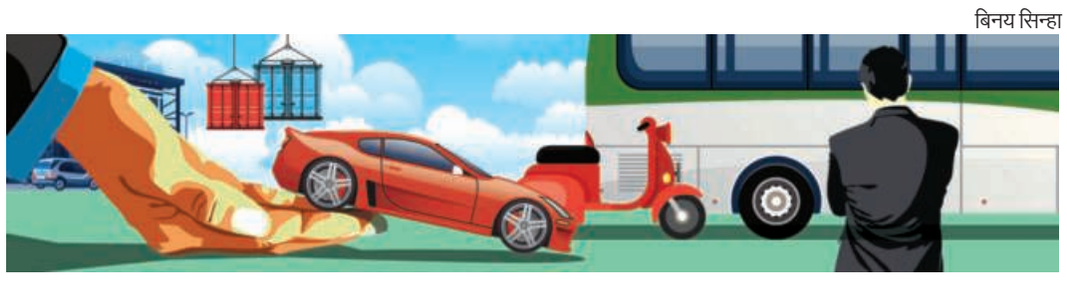

देश के वाहन क्षेत्र में चीन का बढ़ता दखल

घरेलू कार निर्माताओं को शुल्क में कटौती से दिक्कत हो सकती है जैसा कि ऑस्ट्रेलिया में भी देखा गया है। बता रहे हैं अजय श्रीवास्तव

भारत के वाहन उद्योग में जल्द ही बड़े बदलाव और हलचल की स्थिति बनती दिख सकती है क्योंकि इसमें बड़े पैमाने पर चीन की वाहन कंपनियों खासतौर पर इलेक्ट्रिक वाहनों का प्रवेश हो रहा है। इन बदलावों का असर मौजूदा वाहन निर्माताओं पर पड़ने के साथ ही नौकरियों और आयात पर भी होगा।

अगले कुछ वर्षों में चीन की कंपनियां प्रत्यक्ष तरीके से या भारतीय कंपनियों के साथ संयुक्त उपक्रम के तहत प्रत्येक तीन इलेक्ट्रिक वाहनों (ईवी) में से एक वाहन बना सकती हैं। इसके अलावा वे भारत की सड़कों के लिए यात्री और व्यावसायिक वाहन बना सकती हैं।

एसएआईसी मोटर्स (एमजी ब्रांड के मालिक) और भारत के जेएसडब्ल्यू समूह के बीच एक संयुक्त उपक्रम का लक्ष्य 2030 तक 10 लाख नए स्वच्छ ऊर्जा वाहन बेचना है। 1980 के दशक में जिस तरह मारुति सुजूकी ने देश के वाहन क्षेत्र में क्रांति लाने का काम किया था, ठीक उसी तरह से इस संयुक्त उपक्रम के जरिये भी कुछ ऐसा ही किया जा सकता है।

एसएआईसी मोटर्स चार बड़ी सरकारी चीनी वाहन निर्माता कंपनियों में से एक है। वर्ष 2007 में एसएआईसी मोटर्स ने ब्रितानी कार निर्माता कंपनी, एमजी रोवर्स की संपत्ति का अधिग्रहण किया था जब यह दिवालिया हो गई थी। यह गुजरात के हलोल के एक संयंत्र का इस्तेमाल कर हेक्टर और जेएस ईवी जैसे वाहन, भारतीय बाजार के लिए बना रही है। इस संयंत्र का स्वामित्व पहले जनरल मोटर्स के पास था।

केवल एसएआईसी मोटर्स ही इस होड़ में अकेले नहीं है। चीन की कार कंपनी बीवाईडी (बिल्ड योर ड्रीम्स) ऑटो भी भारत में इलेक्ट्रिक वाहन बेचती है और साथ ही बसें, ट्रक, कार और स्पोर्ट्स यूटिलिटी व्हीकल (एसयूवी) भी बेचती है। बीवाईडी ने मेघा इंजीनियरिंग के साथ साझेदारी के जरिये ओलेक्ट्रा ब्रांड के तहत स्वतंत्र तरीके से व्यावसायिक वाहन क्षेत्र में प्रवेश किया है। हाल ही में बीवाईडी ने भी पूरी तरह तैयार वाहन (सीबीयू) का आयात शुरू किया है। इसी तरह वॉल्वो कार का आयात भी चीन से किया जा रहा है जो असेंबल किए जाने वाले वाहन (सीकेडी) के किट के तौर पर आता है।

चीन की कंपनियां जैसे कि चांगान ऑटोमोबिल, जिंको सोलर और चोंगतोंग बस और फोटॉन मोटर सहित कई बस और ट्रक निर्माता कंपनियों की मौजूदगी है जो देश में चीन के वाहन क्षेत्र की उपस्थिति में अपना योगदान दे रही हैं। इसके अलावा ग्रेट वॉल मोटर्स और हाइमा ऑटोमोबाइल जैसी कंपनियां भी भारतीय बाजारों में प्रवेश करने की कोशिश में हैं। भारतीय सड़कों पर चलने वाले ई-रिक्शा और दोपहिया वाहन भी चीन के कलपुर्जों से बने हुए हैं। भारत चीन की कंपनियों को काफी राहत पहुंचाता है। यूरोपीय संघ और अमेरिका में चीन के इलेक्ट्रिक वाहनों का निर्यात घट रहा है क्योंकि वहां सब्सिडी को लेकर जांच चल रही है और साथ ही चीन से निर्यात होने वाले सब्सिडी वाली कारों और ईवी बैटरियों पर व्यापार प्रतिबंध बढ़ गया है।

भारत के वाहन उद्योग की साख बेहद आकर्षक है और यह भारत का सबसे बड़ा औद्योगिक तंत्र है जिसका देश के विनिर्माण सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में एक-तिहाई से अधिक योगदान है और यह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष तरीके से 2 लाख नौकरियों के मौके दे रहा है। चीन, जापान और अमेरिका के बाद भारत दुनिया में चौथा सबसे बड़े पैमाने पर कार बनाने वाला देश है और इसने वर्ष 2023 में 46 लाख कार बनाई हैं।

कार निर्यात में देश 10वें पायदान पर है और इसकी वैश्विक हिस्सेदारी 2.4 प्रतिशत है। वित्त वर्ष 2023 में भारत के वाहन और इसके कलपुर्जा उद्योग का कारोबार 150 अरब डॉलर से अधिक हो गया। निर्यात के आंकड़े महत्त्वपूर्ण रहे हैं जिसमें कार का निर्यात 8.7 अरब डॉलर, दोपहिया वाहनों का निर्यात 2.8 अरब डॉलर और वाहन के कलपुर्जों का निर्यात 7.3 अरब डॉलर रहा। वर्ष 1980 के दशक की शुरुआत में मारुति उद्योग लिमिटेड और जापान के सुजूकी कॉरपोरेशन के संयुक्त उपक्रम के जरिये देश के वाहन क्षेत्र में तेजी देखी गई थी। इसके बाद अगले 20 वर्षों में जापान की तकनीक के मेल और भारत की ढलाई और निर्माण में विशेषज्ञता के बलबूते घरेलू वाहन क्षेत्र की उत्पादकता में 250 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई और यह वृद्धि वाली राह पर आगे बढ़ा।

इसके बाद, सरकार के तीन फैसलों ने उद्योग के स्वरूप को बदल दिया जिसमें पूरी तरह से तैयार कार और मोटरसाइकिल पर 70-125 प्रतिशत तक आयात शुल्क लगाना, लेकिन इसके कुछ कलपुर्जों पर 7.5-10 प्रतिशत तक का कम शुल्क लगाना ताकि इनपुट आयात की अनुमति दी जा सके, मुक्त व्यापार समझौते (एफटीए) के तहत शुल्क नहीं घटाना और स्वचालित तरीके से 100 प्रतिशत तक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति देना शामिल है।

उच्च आयात शुल्क ने भारत में परिचालन करने वाली कंपनियों को बाहरी प्रतिस्पर्धा से बचाया। इसके साथ ही भारत में कार बनाने वाली कई शीर्ष वैश्विक कंपनियों की उपस्थिति के चलते आंतरिक प्रतिस्पर्धा में तेजी आई।

कई विशेषज्ञ उच्च स्तर के शुल्कों के औचित्य पर सवाल उठाते हैं। हालांकि, ऑस्ट्रेलिया के वाहन उद्योग का उदाहरण लिया जाए तो यहां शुल्क में कटौती को स्वीकारा नहीं गया। 1987 में, ऑस्ट्रेलिया ने 45 प्रतिशत के आयात शुल्क के संरक्षण के साथ ही 89 प्रतिशत कार का उत्पादन किया। हालांकि, जैसे ही ऑस्ट्रेलिया ने इन शुल्कों को धीरे-धीरे कम किया, स्थानीय स्तर पर बनाए जाने वाले वाहनों का अनुपात कम हो गया। अब यह आलम है कि केवल 5 प्रतिशत के आयात शुल्क के साथ, ऑस्ट्रेलिया अपनी लगभग सभी कार का आयात करता है।

निसान, फोर्ड, जनरल मोटर्स, टोयोटा और मित्सुबिशी जैसे प्रमुख वाहन निर्माताओं ने उस वक्त से ही वहां अपना परिचालन बंद कर दिया है जो कभी ऑस्ट्रेलिया में वाहनों का निर्माण करते थे। भारत के वाहन उद्योग में वृद्धि की संभावना इस वजह से भी है क्योंकि यहां प्रति व्यक्ति के हिसाब से कार की संख्या कम है और प्रत्येक 1,000 भारतीयों में से केवल 22 लोगों के पास ही अपनी कार है। वहीं इसकी तुलना में अमेरिका में 1,000 लोगों में से 980 लोगों के पास कार हैं जबकि चीन में 164 लोगों के पास कार है। बढ़ती क्रय शक्ति, शहरीकरण की रफ्तार में तेजी और सरकार की पहल से भी इसमें मदद मिली है। इन सभी वजहों से भी वैश्विक वाहन निर्माताओं की भारत में दिलचस्पी बढ़ रही है।

मौजूदा उद्योग की संरचना देखें तो भारत की करीब 70 फीसदी कार उन कंपनियों द्वारा बनाई जाती हैं जिनका नियंत्रण सुजूकी, ह्युंडै, किया, टोयोटा, होंडा, फोर्ड, स्कोडा, रेनो, निसान और मर्सिडीज जैसी विदेशी कंपनियों के हाथों में है। प्रमुख भारतीय कंपनियों में टाटा मोटर्स और महिंद्रा ऐंड महिंद्रा है। ईवी के क्षेत्र में उभरते खिलाड़ियों में ओला इलेक्ट्रिक और एथर एनर्जी भी अपनी मौजूदगी दर्ज करा रहे हैं।

भारतीय बाजार में चीन की कंपनियों के प्रवेश से निश्चित रूप से जापानी, कोरियाई और यूरोपीय कंपनियों की हिस्सेदारी कम हो जाएगी। ये कंपनियां घरेलू वाहन/ईवी निर्माताओं, ईवी वैल्यू चेन क्षेत्र में काम करने वाली कंपनियों पर प्रभाव डालने के साथ ही बैटरी निर्माण पर भी असर डालेंगी।

भारत के लगभग एक-चौथाई वाहन कलपुर्जों का आयात चीन से होता है। भारत में कार बनाने वाली चीन की कंपनियां भी चीन से अधिकांश वाहन पुर्जों का आयात करती हैं ऐसे में चीन पर भारत की निर्भरता तेजी से बढ़ेगी। सरकार ने न्यूनतम 35,000 डॉलर मूल्य वाले इलेक्ट्रिक वाहनों पर आयात शुल्क 70-100 प्रतिशत से घटाकर 15 प्रतिशत कर दी है। रियायती आयात शुल्क केवल उन्हीं मूल उपकरण निर्माताओं (ओईएम) द्वारा संभव है जो तीन साल की अवधि के भीतर स्थानीय विनिर्माण के लिए 50 करोड़ डॉलर का न्यूनतम निवेश कर सकते हैं। इस तरह के ओईएम पांच वर्ष की अवधि में 40,000 वाहनों तक का आयात कर सकते हैं।

इस तरह की शुल्क कटौती से चीन की वाहन निर्माता कंपनियों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से फायदा मिलेगा क्योंकि वे ईवी और बैटरियों की प्रमुख आपूर्तिकर्ता हैं। चीन पर आपूर्ति श्रृंखला की निर्भरता तेजी से तब भी बढ़ने वाली है जब गैर-चीनी कंपनियों ने (टेस्ला, विनफास्ट) भी भारत में अपना संचालन शुरू कर दिया है।

ऐसे में सरकार को ईवी के लिए सब्सिडी देने के बजाय अत्याधुनिक बैटरी तकनीक के लिए शोध एवं विकास पर निवेश को अवश्य बढ़ावा देना चाहिए। ईवी के आयात में 70-90 फीसदी तक की तेजी आई है और बैटरियों सहित ज्यादातर आयात चीन से किया जाता है। हालांकि जब करीब 70 फीसदी से अधिक बिजली कोयला से तैयार होती है ऐसे में ईवी की भी निर्भरता पूरी तरह से स्वच्छ ऊर्जा पर नहीं होगी।

भारत को दीर्घकालिक अवधि के लिए रणनीतिक तरीके से सोचने की जरूरत है। विदेशी और भारतीय कार निर्माताओं के प्रतिस्पर्द्धी हितों के बीच उलझे वाहन संगठन और आयात समर्थक उद्योग की दिशा तय करने में प्रभावी नहीं हो सकते हैं।

(लेखक ग्लोबल ट्रेड रिसर्च इनीशिएटिव के संस्थापक हैं)

स्थायी शांति की दिशा में कैसे बढ़े इजरायल?

हमास द्वारा गत वर्ष 7 अक्टूबर को किए खूनी आतंकी हमले के बाद तीन बातें निश्चित थीं। पहला, यह संभावना नजर आई कि इजरायली समाज उसी तरह प्रतिक्रिया देगा जैसी प्रतिक्रिया अधिकांश समाज हिंसात्मक आतंकी हमलों के दौरान देते हैं: यानी बिना सोचे-समझे जवाब देना। दूसरा, इजरायल को सार्वजनिक और राजनीतिक स्तर पर समर्थन मजबूत होगा, खासतौर पर पश्चिमी देशों का समर्थन। तीसरा, पश्चिम एशिया में बीते एक दशक के दौरान स्थिरता और क्षेत्रीय एकीकरण के जो प्रयास हो रहे थे उन्हें काफी नुकसान पहुंचेगा।

इन तीनों में से केवल डेढ़ बातें ही अनुमान के मुताबिक घटती होती नजर आई हैं। इजरायली समाज पहले ही कुछ दशक पूर्व की तुलना में अधिक कट्टर हो चुका है। उसने अपनी सेना के जबरदस्त क्रूर और हिंसात्मक हमले का मोटे तौर पर समर्थन ही किया। वहां का मीडिया भी शायद ही कभी गाजा में छिड़ी लड़ाई के इंसानों पर पड़ रहे असर की बात करता है और देश का नेतृत्व इस बुनियादी सवाल से निपटने का अनिच्छुक नजर आ रहा है कि बिना गाजा को नष्ट किए हमास को कैसे खत्म किया जा सकता है और हमास के खात्मे के बाद फिलिस्तीनी स्वशासन के बारे में क्या हो सकता है।

यहां एक महत्त्वपूर्ण तथ्य को स्वीकार करना होगा कि इजरायल के अलोकप्रिय प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू शायद इस युद्ध को इसलिए लड़ रहे हों ताकि वे पद पर लंबे समय तक बने रह सकें लेकिन यह लड़ाई अकेले नेतन्याहू की नहीं है। यह दावा करना कठिन है कि नेतन्याहू के अलावा अन्य इजरायली नेता भी किसी वैकल्पिक हल के बारे में सोच भी रहे होंगे या उन्हें युद्ध को जीतने का कोई कम हिंसात्मक तरीका सूझ रहा होगा।

नीति नियम
मिहिर शर्मा

ऐसे में इजरायल को शांति और स्थिरता की वापसी के लिए उसके मित्र और साझेदार ही प्रेरित कर सकते हैं। यहां हम दूसरे बिंदु पर आते हैं: यूरोप और अमेरिका में इजरायल को सार्वजनिक और राजनीतिक समर्थन। ऐसा लगता है कि यह समर्थन पूरी तरह अक्षुण्ण है। परंतु क्या वाकई ऐसा है? वास्तव में यह मुश्किल नजर आता है। अगर कोई भी अन्य लोकतांत्रिक राष्ट्रपति सत्ता में होता तो अमेरिका की प्रतिक्रिया इससे शायद बहुत अलग होती। परंतु जो बाइडन एक सांसद के रूप में भी अमेरिकी सीनेट में इजरायल के सर्वाधिक उत्साही समर्थक नजर आते हैं। पिछली बार जब किसी अमेरिकी राष्ट्रपति ने इजरायल पर दबाव बनाने की कोशिश की थी तो वह वाकया करीब तीन दशक पहले घटित हुआ था। उस समय जॉर्ज एचडब्ल्यू बुश ने धमकी दी थी कि अगर निपटान की गतिविधि बंद न होने पर वह इजरायली ऋण पर अमेरिकी गारंटी को वापस ले लेंगे। बाइडन ने उस मसले पर बुश की खिंचाई की थी और ऐसा लगता नहीं है कि तब से अब तक उनकी सोच में बदलाव आया है। परंतु अमेरिकी में अन्य कई लोग जिनमें यहूदी मूल के युवा अमेरिकी भी शामिल हैं, वे उस वक्त की तुलना में अब अलग तरह से सोचते हैं। अमेरिका में शुरू हुए विरोध प्रदर्शन बीते दो सप्ताह में पूरी दुनिया में फैल गए हैं और वे बदलते परिदृश्य के परिचायक हैं। ताजा सर्वेक्षण बताते हैं कि अमेरिका के 10 में से चार युवा सोचते हैं कि अमेरिका इस जंग में इजरायल की 'कुछ ज्यादा' ही मदद कर रहा है।

इस बीच यूरोप में फ्रांसीसी राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों ने इजरायल को चेतावनी दी है कि वह 'महिलाओं और बच्चों' को नहीं मारे। उन्होंने यह भी कहा कि गाजा की आबादी को स्थानांतरित करना एक 'युद्ध अपराध' होगा और गाजा को 'समतल करने' की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि फ्रांस फिलिस्तीनी राज्य को मान्यता दे सकता है। इजरायल की बमबारी की प्रकृति ने भी पश्चिम में उसे समर्थन के आधार को कमजोर किया है।

बहरहाल पश्चिम एशिया में व्यापक अस्थिरता की बात करें तो अमेरिका की प्राथमिकता स्पष्ट रूप से यही है कि युद्ध गाजा तक सीमित रहे। इसमें भी संशय नहीं कि उन्हें यह डर है कि लेबनान में ईरान समर्थित लड़ाके भी इजरायल के खिलाफ लड़ाई में शामिल होंगे। इससे जंग का दायरा फैलेगा और ईरान के शामिल होने से हालात और बिगड़ेंगे।

लेबनान में हिजबुल्ला और ईरानी नेतृत्व के प्रतिरोध ने ऐसा होने से रोक लिया, बावजूद इसके कि ईरानी दूतावास पर इजरायली हवाई हमले में 16 लोगों की जान गई। ऐसा लग रहा है कि व्यापक युद्ध की आशंका को थाम लिया गया है। अरब देशों ने बमबारी के खिलाफ बड़े पैमाने पर प्रदर्शन नहीं होने दिया। उन्हें लगा कि इजरायल के खिलाफ होने वाला विरोध प्रदर्शन इजरायल के साथ उनके रिश्ते सामान्य करने की कोशिश के विरुद्ध जा सकता है। भारत के नजरिये से देखें तो यह अच्छी बात है क्योंकि व्यापक युद्ध की स्थिति में ईंधन कीमतें बढ़तीं और अर्थव्यवस्था पर बुरा असर होता।

एक तथ्य यह भी है कि पश्चिम एशिया का नए सिरे से एकीकरण जिसके लिए भारतीय अधिकारी पिछले कुछ वर्षों में लगातार प्रयासरत भी रहे हैं और जो देश की अर्थव्यवस्था और व्यापार के लिए मददगार साबित हो सकता है, वह प्रक्रिया गाजा पर हमले के कारण रुक गई है। आखिर में, एक स्पष्ट तस्वीर उभरती नजर आती है। इजरायल के पड़ोसी, मित्र और शत्रु सभी पीछे हटे हैं। देश खुद प्रतिशोध की भावना में अपना नुकसान करता जा रहा है। एशिया के हम जैसे बाकी देश केवल उम्मीद ही कर सकते हैं कि पश्चिम में सुसंगतता जल्दी पूरी हो और एक नई सहमति बने जो इजरायल को अधिक स्थायी शांति की दिशा में ले जाए।

आपका पक्ष

सूरत वस्त्र उद्योग के संकट

लेख 'कपड़ा नगरी सूरत में अलग तरह का संकट' में सूरत के वस्त्र उद्योग की चिंताओं को सरकार और जनमानस तक ले जाने के लिए साधुवाद का पात्र है। राजनीतिक विषयों से अलग उद्योग व्यापार के विषय विचार विमर्श के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि इसी से लाखों श्रमिकों, मिल मालिकों और उद्योगों से जुड़े लाखों परिवारों का भविष्य जुड़ा है। करीब 80,000 करोड़ रुपये के उद्योग, 50,000 कपड़ा मिलों और 20 लाख श्रमिकों के माध्यम से भारत और विश्व में कॉटन, सिल्क, सिंथेटिक और रेडीमेड कपड़ों की आपूर्ति करने वाले सूरत शहर की सुध लेना राज्य और केंद्र सरकार, स्थानीय प्रशासन, व्यापार एसोसिएशन सभी की जिम्मेदारी है। भारत में निर्मित माल की गुणवत्ता पर ध्यान देना और उसे सुनिश्चित करना आवश्यक है। कपड़ों के स्क्रैप का निस्तारण और उनकी रिसाइक्लिंग की व्यवस्था स्थानीय प्रशासन और मिल मालिकों की

सूरत के जरी उद्योग को जीआई टैग मिला है, अब सूरत सिल्क को भी जीआई टैग दिलाने के लिए प्रयास होना चाहिए

जिम्मेदारी है। संभवतः सूरत के जरी उद्योग को जीआई टैग मिला है। इसी प्रकार सूरत सिल्क को भी जीआई टैग दिलाने के लिए प्रयास होना चाहिए जिससे सूरत के सिल्क और वस्त्र उद्योग को विश्व में पहचान और प्रसिद्धि मिले। लगभग 140 करोड़ जनसंख्या के देश में मांग कम होने लगे तो यह चिंता उद्योग के लिए गंभीरता से सोचने का विषय है, सरकार की जिम्मेदारी बाद में आती है। गुजरात में टेक्सटाइल पार्क का निर्माण बहुत शीघ्रता से किया जाना जरूरी है।

विनोद जौहरी, दिल्ली

सूखे या हरे चारे की उपलब्धता हो

तंबाकू और फलों की खेती से पशुओं के लिए चारे का संकट दिनों दिन गंभीर होता जा रहा है। पशुपालन, घी और दूध महंगा होता जा रहा है। चारे के अभाव से पशुओं के लिए आहार का प्रतिशत काफी कम हुआ है। चारागाह भूमि में बारिश में उगी घास से वे अपना उदर पोषण कर लेते हैं मगर शेष मौसम उनके लिए दुखदायी होते हैं। पशुओं के लिए खेत के कुछ भाग में चारे जैसी फसल के लिए आवश्यक है। तंबाकू और फलों आदि की फसलों के कारण चारे का मिलना कठिन होता जा रहा है। महंगे भाव का चारा बाहर से खरीद कर खिलाते हैं जो उनके बजट के अनुकूल नही होता है। खेत भी अब कॉलोनियों में तब्दील होते जा रहे हैं। भविष्य में पशुओं के आहार की समस्या विकराल रूप लेगी। कम कीमत पर गांवों में हरा या सूखा चारा उपलब्ध हो, ऐसी व्यवस्था की दरकार है ताकि पशु आहार सुलभता से उपलब्ध हो सके।

संजय वर्मा, धार

नजरअंदाज हो गए आर्थिक और कारोबारी मुद्दे

हर आम चुनाव से पहले देश की बहुसंख्यक जनता को यह अपेक्षा होती ही है कि इस बार उसे आर्थिक और कारोबारी मोर्चे पर क्या राहत मिल सकती है। लेकिन इस बार के आम चुनाव में सत्तारूढ़ दल व अन्य विपक्षी दलों ने पिछले घिसे पिटे मुद्दों के अलावा आर्थिक और कारोबार से संबंधित कोई विशेष बात या घोषणा नहीं की है। इसलिए आर्थिक और कारोबारी मुद्दों को महत्त्व नहीं दिए जाने से मतदाता निराश हैं।

डॉ. हेमलता कर्नावट, इंदौर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

भारतीय मूल की अंतरिक्ष यात्री सुनीता विलियम्स (बाएं) 58 साल की उम्र में मंगलवार को बतौर पायलट तीसरी बार फ्लोरिडा स्थित केप केनवेरल अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन से बोइंग के स्टारलाइनर अंतरिक्ष यान से उड़ान भरेंगी। अंतरिक्ष यान सोमवार को स्थानीय समयानुसार रात 10:34 बजे (मंगलवार को अंतरराष्ट्रीय समयानुसार 8:04 बजे) रवाना होगा।

स्कूलों को धमकी

पहली मई को जैसे राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के स्कूलों को बम की धमकी वाले ई-मेल मिले थे, ठीक उसी तरह अहमदाबाद के स्कूलों को भी ई-मेल मिले हैं। सप्ताह भर में यह दूसरी बार है, जब स्कूलों को निशाना बनाने की धमकी मिली है। पहले राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के कम से कम 200 स्कूल निशाने पर थे और सोमवार को अहमदाबाद के कम से कम 7-8 स्कूलों को दहशत में लाने की साजिश हुई है। दिल्ली की तरह अहमदाबाद में भी पुलिस ने पूरी सतर्कता बरती और खतरे की किसी भी आशंका के समाधान के तमाम प्रबंध किए। अहमदाबाद में भय पैदा करने की यह साजिश तब सामने आई है, जब गुजरात में आज मतदान होने जा रहा है। क्या कोई ऐसा आतंकी संगठन है, जो भारत में चुनाव के समय किसी कारस्तानी को अंजाम देना चाहता है? यह विशेष रूप से ध्यान देने की बात है कि इस बार भारत में चुनाव बेहद शांतिपूर्ण माहौल में हो रहे हैं। ऐसे में, स्कूलों को निशाना बनाने की धमकी के निहितार्थ को समझना मुश्किल नहीं है।

खैर, साइबर क्राइम, अहमदाबाद की पुलिस उपायुक्त ने प्राथमिक जांच के आधार पर जो इशारा किया है, उसके अनुसार, धमकी भरे ई-मेल रूस से आए हैं। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के स्कूलों को भी रूस से ही धमकियां मिली थीं। मतलब, 1 मई और 6 मई को धमकी देने वाले आतंकी एक ही समूह के हो सकते हैं। अहमदाबाद के स्कूलों में तमाम तरह से सुरक्षा जांच कर ली गई है, पर आगामी दिनों में भी तमाम स्कूलों की सुरक्षा के पुख्ता प्रबंध होने चाहिए। पता नहीं, किस देश में छिपकर कायर आतंकी अपराध को अंजाम दे रहे हैं? स्कूलों को निशाना बनाने के बारे में सोचने वाले हैवानों को जल्द से जल्द शिकंजे में लाना चाहिए। कथित डार्क वेब का हवाला दिया जा रहा है, जहां छिपे हुए किसी तथ्य को खोजना बहुत मुश्किल होता है, पर यह काम नामुमकिन नहीं है। तकनीक के विशेषज्ञों का यह कर्तव्य है कि वे धमकी के मूल स्रोत तक पहुंचें और धमकी के दुश्मनों को सबक सिखाने के लिए कठघरे में लाएं। साइबर अपराध विशेषज्ञ ई-मेल का विश्लेषण करने और उनकी उत्पत्ति का पता लगाने के लिए प्रभावित स्कूलों के साथ मिलकर काम कर रहे हैं। मतदान के मद्देनजर स्कूलों ने उचित ही कड़े सुरक्षा प्रोटोकॉल लागू किए हैं, तो कुछ ने अगली जानकारी मिलने तक स्कूलों को अस्थायी रूप से बंद करने का विकल्प चुना है। स्वयं स्कूलों को अपने स्तर पर सुरक्षा के लिए चौकस रहना चाहिए। बच्चों को भयभीत करने के बजाय सतर्क रहना सिखाना चाहिए। एक सतर्क समाज ही अपनी मुकम्मल सुरक्षा सुनिश्चित रख पाता है।

भारत में लोकसभा चुनाव बेहद शांतिपूर्ण माहौल में हो रहे हैं। ऐसे में, स्कूलों को निशाना बनाने की बार-बार धमकी के निहितार्थ को समझना बहुत मुश्किल नहीं है।

अगर धमकियां फर्जी हैं, तब भी ये बहुत गंभीर हैं। इनकी पूरी पड़ताल से ही आशंकाओं का समाधान किया जा सकता है। खुफिया अधिकारियों और सुरक्षा अधिकारियों के साथ ही साइबर विशेषज्ञों के लिए भी यह एक बड़ी चुनौती है। अगर विदेश में बैठकर कोई धमका रहा है और उसकी हरकतों को हम रोक न पाएं, तो इससे दूसरे अपराधियों का भी दुस्साहस बढ़ेगा। दूसरी ओर, हमारे स्कूलों को भी सुरक्षा की दृष्टि से सभी प्रबंध सीखने पड़ेंगे। स्कूल में सीढ़ियों, गलियारों, भवनों, कक्षाओं, पानी, बिजली की गुणवत्ता को परख लेना चाहिए। स्कूलों के संसाधन और सुरक्षा पर सरकारों को भी निवेश बढ़ाने की जरूरत है। प्राथमिक रूप से यह स्कूलों की जिम्मेदारी है कि वे अपने छात्रों की सुरक्षा से कोई समझौता न करें।

हिन्दुस्तान | **75 साल पहले** 07 मई, 1949

न्याय की हत्या

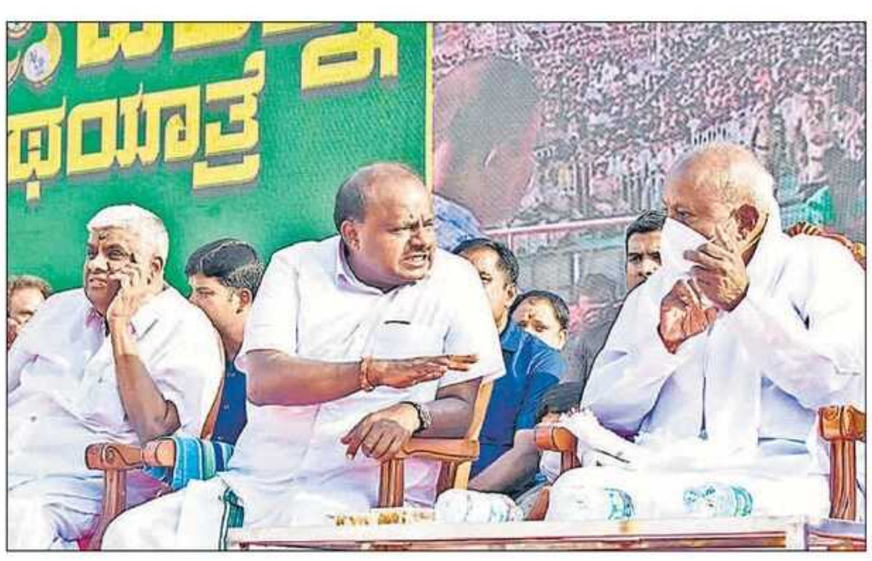

ब्रिटेन ने भारत और ब्रह्म देश को तो स्वतंत्र कर दिया, किन्तु मलाया में उसका साम्राज्यवादी शासन जारी है। मलाया रबड़ और टिन जैसी आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन करता है। ब्रिटेन इन चीजों का मोह छोड़ने में असमर्थ है। मलाया में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध व्यापक विद्रोह हो रहा है। ब्रिटेन का कहना है कि यह विद्रोह कम्यूनिस्टों ने भड़काया है। इस आरोप में थोड़ी-बहुत सचाई हो सकती है। किन्तु साथ ही इस सत्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि मलाया में अंग्रेज जमींदारों ने चीनी और भारतीय मजदूरों का खूब शोषण किया है। जो दरिद्रता और अभाव से पीड़ित हैं, उनमें कम्यूनिस्ट विचारधारा आसानी से जड़ जमा लेती है। इसलिए कम्यूनिस्ट विचारधारा को केवल तोप और तलवार के जोर से नहीं दबाया जा सकता। मजदूरों की हालत को जब तक नहीं सुधारा जायेगा, तब तक उनका असन्तोष किसी न किसी रूप में प्रकट होता ही रहेगा।

मलाया में भारतीय मजदूर भी काम करते हैं। मलायी शासन के विरुद्ध जो उपद्रव हो रहे हैं, उनमें भारतीय मजदूरों ने कोई सक्रिय भाग नहीं लिया है। किन्तु जिन्हें मजदूरों का दमन करना मंजूर है, उनको ऐसी बातों की चिन्ता करने की जरूरत नहीं होती। श्री गणपति भारतीय मजदूर थे और मलाया की मजदूर यूनियनों के संघ के मंत्री थे। उन्हें अधिकारियों का कोपभाजन बनना पड़ा और वह महीनों तक छिपे-छिपे फिरते रहे। आखिर जब वह भगोड़े जीवन से बेजार हो गये और उन्हें मलेरिया ने आ घेरा तो उन्होंने आत्म-समर्पण करने का निश्चय कर लिया। वह इसी इरादे से रवाना हुए और जब रबड़ के एक पेड़ के नीचे विश्राम कर रहे थे तो एक अंग्रेज जमींदार की उन पर नजर पड़ गई जिसने उन्हें पकड़वा दिया। गिरफ्तारी के समय श्री गणपति के पास एक पिस्तौल थी। मलाया में अधिकारियों ने जो असाधारण कानून बनाये हुए हैं। उनके अनुसार हथियार रखना गम्भीर अपराध है और उसके लिए मृत्युदण्ड का विधान है। वादी पक्ष का आरोप था कि श्री गणपति ने गिरफ्तारी के समय पुलिस का मुकाबला किया, जबकि श्री गणपति ने इस आरोप से इन्कार किया। अदालत में दो न्यायाधीश थे- एक अंग्रेज और दूसरे भारतीय। श्री गणपति को बचाव के लिए एक वकील दिया गया, जिन्होंने यही वकालत की कि अभियुक्त के बचाव में उन्हें कुछ नहीं कहना। श्री गणपति को मृत्युदण्ड सुना दिया गया।

कर्नाटक की राह में रेवन्ना मोड़

दक्षिण एक्सप्रेस

यहां स्कैन करें

एस. श्रीनिवासन | वरिष्ठ पत्रकार

कर्नाटक में भाजपा ने यह सोचकर जनता दल (सेक्युलर) के साथ गठबंधन किया था कि इससे उसे लाभ मिलेगा, पर अब उसे यहां अपने ही बल से पूरा जोर लगाना पड़ रहा है।

भारतीय जनता पार्टी ने दक्षिण भारत में चुनावी लाभ का जो सपना देखा था, वह कर्नाटक के बदले घटनाक्रम से जैसे घिरता हुआ दिख रहा है। पिछली बार प्रदेश की 28 में से 25 सीटें जीतने वाली भाजपा को इस बार बड़ी जीत के लिए ज्यादा जोर लगाना पड़ रहा है। सबकी जुबान पर सवाल है कि क्या पेन-ड्राइव सेक्स स्कैंडल और लिंगायत समाज (उत्तरी कर्नाटक में भगवा दल का पारंपरिक वोट बैंक) में उत्साह की कमी से भाजपा की संभावनाओं पर असर पड़ सकता है?

दरअसल, जनता दल (सेक्युलर) के संरक्षक एचडी देवेगौड़ा के पोते प्रज्वल रेवन्ना का सेक्स स्कैंडल एक अप्रत्याशित झटके की तरह पार्टी के सामने आया है। एनडीए के बड़े नेता रेवन्ना के विदेश भागने के लिए सूबे की सिद्धारमैया सरकार पर उंगली उठाकर विवाद से बचने की कोशिश कर रहे हैं, लेकिन यह मसला खत्म होने का नाम नहीं ले रहा है। जैसे-जैसे विशेष जांच दल (एसआईटी) की कार्रवाई आगे बढ़ रही है, गौड़ा परिवार के अंदर की सड़ांध बाहर आ रही है। जनता दल (सेक्युलर) के लिए शर्मिंदगी की बात यह भी है कि पुलिस ने प्रज्वल के पिता और परिवार के बड़े बेटे एचडी रेवन्ना को, जो खुद भी विधायक हैं, एक पीड़िता के अपहरण के आरोप में गिरफ्तार किया है। वह रेवन्ना परिवार की घरेलू सहायिका थी और कहा जाता है कि परिवार का राज न खुले, इसलिए उसे एक फॉर्म हाउस में बंधक बनाकर रखा गया था। साफ है, अपने दादा की पारंपरिक लोकसभा सीट 'हासन' से एक और कार्यकाल की उम्मीदें पालने वाले प्रज्वल रेवन्ना ने अपने कारनामे से पूरे परिवार को बेतहाशा दुख और शर्मिंदगी में डुबो दिया है।

उल्लेखनीय है, पूर्व प्रधानमंत्री देवेगौड़ा ने अपनी बढ़ती उम्र (वह 90 साल से अधिक आयु के हैं) की परवाह किए बिना जोरदार प्रचार किया था और मतदाताओं से अपने पोते को एक और मौका देने की भावनात्मक अपील की थी। दूसरे चरण के चुनाव-प्रचार के दौरान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी प्रज्वल और एचडी देवेगौड़ा के साथ मंच साझा किया था। हालांकि, जब यह स्कैंडल सामने आया, तब तक कर्नाटक में पहले चरण की 14 सीटों के लिए चुनाव हो चुके थे, लेकिन इसका असर शेष 14 निर्वाचन क्षेत्रों पर पड़ने की आशंका है, जो कर्नाटक के उत्तरी हिस्से की सीटें हैं। पहले चरण का मतदान राज्य के दक्षिणी हिस्से में हुआ था, जहां वोक्कालिगा समुदाय प्रभावी है और देवेगौड़ा का पारंपरिक वोटर है।

कर्नाटक में भाजपा ने यह सोचकर जनता दल (सेक्युलर) के साथ गठबंधन किया था कि इससे उसे लाभ मिलेगा। मगर रिपोर्टों के मुताबिक, वोक्कालिगा समुदाय के ही डीके शिवकुमार (उप-मुख्यमंत्री) की मदद से कांग्रेस यहां भाजपा को टक्कर दे रही है। इसीलिए माना जा रहा है कि इस बार 2019 की तरह भाजपा को आसानी से शायद ही सफलता मिल सकेगी। विधानसभा चुनाव में अप्रत्याशित जीत हासिल करने वाली कांग्रेस ने भाजपा पर दबाव बनाए रखा है। उसने अपने जमीनी कार्यकर्ताओं में एक नई जान फूंक दी है और अपने सभी विधायकों-मंत्रियों अपने-अपने निर्वाचन क्षेत्रों में वोट हासिल करने का लक्ष्य दे दिया है।

एनडीए नेताओं ने यह कहकर मतदाताओं को प्रभावित करने का प्रयास किया है कि समय पर कार्रवाई करने में सिद्धारमैया सरकार विफल रही और प्रज्वल को विदेश भागने का मौका मिल गया। मगर इसका उल्टा असर तब हुआ, जब प्रज्वल के एक पूर्व ड्राइवर का विस्फोटक वीडियो वायरल हो गया। उस ड्राइवर ने कहा कि 15 साल तक परिवार की सेवा करने के बाद उसने एक वर्ष पहले नौकरी छोड़ दी। उसका दावा है कि उसने पेन ड्राइव की एक कॉपी स्थानीय भाजपा नेता देवराज गौड़ा को दी थी, किसी कांग्रेस नेता को नहीं। देवराज ने दिसंबर में इस मुद्दे पर प्रेस कॉन्फ्रेंस भी की थी और रेवन्ना की उम्मीदवारी का भी वह कड़ा विरोध करते रहे। देवराज के मुताबिक, उन्होंने इस वीडियो की जानकारी भाजपा के राज्यस्तरीय नेताओं के साथ-साथ कई केंद्रीय मंत्रियों को भी दी थी। जाहिर है, इससे कांग्रेस को प्रधानमंत्री व गृह मंत्री को घेरने का पूरा मौका मिल गया है कि उन्होंने समय पर कोई कार्रवाई क्यों नहीं की?

इस मामले के जल्द समापन की संभावना नहीं दिखती, क्योंकि ऐसा माना जाता है कि कई अन्य नेता भी इसमें शामिल हैं। जनता दल (सेक्युलर) मानो धराशायी होने जा रहा है, क्योंकि हालिया विधानसभा चुनाव में हार के बाद अपनी प्रासंगिकता बनाए रखने के आखिरी प्रयास के तहत इसने भाजपा से चुनावी गठबंधन किया था। देवेगौड़ा के छोटे बेटे और पूर्व मुख्यमंत्री एचडी कुमारस्वामी ने, जो पार्टी का नेतृत्व भी कर रहे हैं, प्रज्वल को पार्टी से निलंबित कर दिया है। अब देखना यह है कि उनके पिता व कुमारस्वामी के बड़े भाई एचडी रेवन्ना पर कोई गाज गिरती है या नहीं? ऐसा इसलिए भी, क्योंकि देवेगौड़ा की सियासी विरासत को लेकर परिवार में मतभेद रहे हैं।

इस बीच, लिंगायतों के प्रभुत्व वाले उत्तर कर्नाटक में भाजपा को अपनी सीटें बरकरार रखने की उम्मीद है, क्योंकि 2019 के चुनाव में उसे अभूतपूर्व समर्थन मिला था। मगर ऐसा लगता है कि लिंगायत नेता संघ की बातों को मानने को तैयार नहीं दिखते। इनमें बीएस येदियुरप्पा भी शामिल हैं। वे एक स्वतंत्र समुदाय होने पर गर्व महसूस करते हैं। मुख्यमंत्री सिद्धारमैया ने भी इस समुदाय के साथ अपने संबंध बढ़ाए हैं। लिंगायतों के एक बड़े उप-संप्रदाय पंचमसाली का भी एक हिस्सा एनडीए से नाराज बताया जा रहा है। दरअसल, इस समुदाय के भीतर आरक्षण की मांग को हवा देकर इन्हें बांटने का कोशिश हुई थी।

इन सबने कर्नाटक में भाजपा की आसान राह मुश्किल बना दी है। इसी कारण यह माना जा रहा है कि पार्टी के लिए 2019 के प्रदर्शन को दोहरा पाना बहुत महत्वपूर्ण होगा। जनता दल (सेक्युलर) में आसन्न टूट से भारतीय जनता पार्टी को मदद मिल सकती है, क्योंकि ऐसी सूरत में कर्नाटक दो दलों वाले राज्य में बदल सकता है, जिसके एक छोर पर भगवा पार्टी, तो दूसरे पर कांग्रेस हो सकती है। मगर भाजपा की तात्कालिक चिंता मौजूदा आम चुनाव जीतने की है, क्योंकि कर्नाटक के नतीजे दक्षिण भारत के बाकी राज्यों में मिलने वाले सियासी फायदे पर भी असर डालेंगे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

टैगोर ने भारत को कहा था महामानव का सागर तट

यहां स्कैन करें

सदानंद शाही | प्रोफेसर, काशी हिंदू विश्वविद्यालय

महाकवि रवींद्रनाथ टैगोर न केवल बंगाल के लिए, बल्कि समूचे भारत और सच पूछिए, तो विश्व मानवता के लिए प्रकाश पुंज की तरह हैं। वह जितने बंगाल के गौरव हैं, उतने ही भारत और उतने ही विश्व मानवता के। हम सब जानते हैं कि भारत में जब नवजागरण ने दस्तक दी, तब सबसे पहले उसने बंगाल का ही दरवाजा खटखटाया था। टैगोर की खासियत यह है कि उन्होंने जागरण की रोशनी में भारतीयता का नया पाठ किया। हम भारत के लोग जिस ऋषि परंपरा, संत परंपरा और भारतीय ज्ञान परंपरा पर बिना समझे इठलाते रहते हैं, टैगोर ने उसे समझने की दृष्टि और आत्मसात करने की तमीज दी और विश्व मानवता को सच्ची भारतीयता का मतलब बताया।

जिस किसी व्यक्ति को विश्व भारती जाने का मौका मिला होगा, वह विश्व भारती के ध्येय वाक्य *अथेयं विश्व भारती यत्र विश्वं भवत्येक नीडम्* पर जरूर मुग्ध हुआ होगा। सच पूछिए, तो इस छोटे से वाक्य में टैगोर ने अपने भारत की परिकल्पना ही प्रस्तुत कर दी है। यह विश्व भारती है, जिसमें समूचा विश्व एक घर या घोंसले में रहता है या रह सकता है। मानवता का यह संदेश टैगोर ने *गीतांजलि* के माध्यम से पूरी दुनिया को दिया। पूरी दुनिया ने टैगोर को सिर-माथे इसलिए बिठाया कि वह भारतीय संतों की इस धारणा को कि वर्ण, जाति, भूगोल के भेद सब व्यर्थ हैं, आधुनिक भाषा में बता रहे थे।

गुरुदेव की खासियत यह है कि उन्होंने इस देश में नवजागरण की रोशनी में भारतीयता का नया पाठ किया। टैगोर जयंती पर विशेष :

यह सही है कि गुरुदेव टैगोर ने विश्व मानवता का जो संदेश दिया है, वह मूलतः भारत की अपनी आवाज है, जिसे उन्होंने आज की भाषा में रख दिया है। वह अपनी कविता *निर्झरर स्वप्न भंग* में बार-बार आज पर जोर देते हैं। वह यह जानते थे कि ज्योति-ज्योति या सत्य-सत्य रटने से न प्रकाश होगा और न ही ज्ञान। इसके लिए सत्य की अवतारणा करनी पड़ेगी और ज्योति जलानी पड़ेगी। उन्होंने अपनी कविता में यह अवतारणा की।

टैगोर वैदिक या औपनिषदिक ज्ञान परंपरा को तो आज की भाषा में प्रस्तुत कर ही रहे थे, साथ ही, वह कबीर आदि संतों की वाणी से भी अपनी कविता का प्राण तत्व ले रहे थे। *गीतांजलि* की एक प्रसिद्ध कविता है, *भारत तीर्थ*। यह कविता टैगोर के भारत का एक सुंदर रूपक है। इसमें टैगोर अपने चित्त को 'इस भारत के महामानव के सागर-तट पर धीरे-धीरे जगो' का संदेश देते हैं। जैसे सागर में असंख्य नदियां विलीन हो जाती हैं, वैसे ही भारत के महामानव के सागर तट पर कितने लोगों की दुर्वार मानव धाराएं कहां-कहां से आकर विलीन हो गई हैं। टैगोर के लिए भारत की धरती इसलिए पवित्र है कि इसमें असंख्य मानवों को समाहित कर लेने की उदारता है। वह बार-बार भारत को महामानव का सागर तट कहते हैं। वह अपने चित्त के साथ-साथ भारत के चित्त को जगा रहे हैं। वह एक-एक व्यक्ति को पुकारते हैं, ताकि भारत के महामानव सागर तट पर मंगल घट भरा जा सके। जब सब साथ आएंगे, तभी मंगल घट भरेगा। यहां आने के लिए मान और अपमान से ऊपर उठकर आना होगा। हिंदू और मुसलमान, ब्राह्मण और पतित सबको मान-अपमान से विरत होकर आना होगा। भारत तीर्थ का मंगल कलश इसी से भरेगा।

उनकी भारतीयता अस्मिता का विसर्जन करना सिखाती है, इसे हम गोरा (*गोरा* उपन्यास के नायक) के बदलाव में देख सकते हैं। पूरे उपन्यास में अपनी कट्टर धार्मिक पहचान को लेकर उद्यत रहने वाले गोरा को उपन्यास के अंत में एहसास होता है कि 'कल्पना में गढ़े हुए भारतवर्ष की साधना का कोई अर्थ नहीं है'। वह पाता है कि 'संपूर्ण भारतवर्ष की अच्छाई-बुराई, सुख-दुख, ज्ञान-अज्ञान पूरी तरह मेरे हृदय के निकट आ पहुंचे हैं। मैं आज सचमुच का सेवा का अधिकारी हुआ हूं। मेरे समक्ष वास्तविक कर्म-क्षेत्र आ गया है, वह मेरे मन के भीतर का क्षेत्र नहीं है, वह इन्हीं, बाहर के 25 करोड़ (भारत की पूरी आबादी) लोगों का यथार्थ कल्याण-क्षेत्र है।' वह कह उठता है, 'मैं आज भारतवर्षीय हूं। मेरे भीतर हिंदू, मुसलमान, ईसाई किसी समाज का कोई विरोध नहीं है। आज इस भारतवर्ष के सभी की जात, मेरी जात है, सभी का अन्न, मेरा अन्न है।'

रवींद्रनाथ टैगोर केवल एक नाम नहीं, बल्कि उदात्त भारतीयता के संवाहक हैं। चुनौती यह है कि क्या हमारे भीतर आज की जीवन भाषा में टैगोर की उदात्त भारतीयता को उतारने की क्षमता है?

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

पहले स्वयं को समझिए

मुझसे पूछा गया है कि हम सब जी तो रहे हैं, लेकिन हमें यह नहीं पता कि हम जी क्यों रहे हैं? हममें से अधिकांश व्यक्तियों को ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन का कोई अर्थ नहीं है। क्या आप हमें बता सकते हैं कि हमारे जीने का क्या अर्थ है, क्या उद्देश्य है?

इसके लिए हमें पहले यह जानना होगा कि जीवन से हमारा अभिप्राय क्या है? क्या जीवन का कोई अर्थ, कोई उद्देश्य है? क्या जीवन अपने आप में ही अपना अभिप्राय, अपना उद्देश्य नहीं है? हम उससे और अधिक क्यों चाहते हैं? क्योंकि हम अपने जीवन से असंतुष्ट हैं; हमारा जीवन इतना खोखला, इतना नीरस है कि अब हमें कुछ और भी चाहिए; जो हम कर रहे हैं, उसके परे कुछ और। निस्संदेह, जो समृद्ध जीवन जी रहा है, वह चीजों को ठीक वैसा देख रहा है, जैसी वे हैं और जो कुछ उसके पास है, उससे संतुष्ट है। वह भ्रम में, किसी उलझन में नहीं है। वह स्पष्ट है, इसलिए वह नहीं पूछता कि जीवन का उद्देश्य क्या है? उसके लिए जीना ही आरंभ है और अंत भी!

हमारी कठिनाई यह है कि चूंकि हमारा जीवन खोखला है, इसलिए हम उसका कोई उद्देश्य ढूंढ़कर उसके पीछे दौड़ते रहना चाहते हैं। जीवन का ऐसा उद्देश्य वास्तविकता से रहित, केवल बौद्धिक व्यायाम हो सकता है; जब जीवन के उद्देश्य का अनुशीलन एक रीते हृदय द्वारा किया जाएगा, तो वह उद्देश्य भी रीता, निस्सार ही होगा। अतः हमारा उद्देश्य अपने जीवन को समृद्ध बनाना है, संपत्ति और उसकी सहायक वस्तुओं द्वारा नहीं, बल्कि आंतरिक रूप से। इसका यह अर्थ नहीं है कि यह समृद्धि कोई गोपनीय तत्व है। जब आप कहते हैं कि जीवन का उद्देश्य सुखी होना अथवा ईश्वर को पाना है, तो निश्चय ही यह आकांक्षा जीवन से पलायन है। आपका यह ईश्वर ऐसा कुछ है, जो ज्ञात है। आप केवल उसी लक्ष्य की ओर राह बना सकते हैं, जिसे आप जानते हों; यदि उस चीज तक, जिसे आप ईश्वर कहते हैं, पहुंचने के लिए कोई सीढ़ी बनाते हैं, तो निश्चय ही वह ईश्वर नहीं है। जीवन को जीने में ही यथार्थ को समझा जा सकता है, पलायन करके नहीं।

जीवन पारस्परिकता है, संबंध है, संबंधों के बीच हो रहा कर्म है; जब हम संबंध को नहीं समझ पाते अथवा जब संबंध भ्रांत, अस्पष्ट होता है, तब किसी पूर्ण अर्थ की तलाश करने लगते हैं।

जब आप जीवन का कोई उद्देश्य तलाशते हैं, तब वस्तुतः आप पलायन कर रहे होते हैं, जीवन क्या है, इसे नहीं समझ रहे होते। जीवन पारस्परिकता है, संबंध है, संबंधों के बीच हो रहा कर्म है; जब हम संबंध को नहीं समझ पाते अथवा जब संबंध भ्रांत, अस्पष्ट होता है, तब किसी पूर्णतर अर्थ की तलाश करने लगते हैं। हमारे जीवन इतने खोखले क्यों हैं? हम इतने अकेले, इतने कुंठाग्रस्त क्यों हैं? क्योंकि हमने कभी अपने भीतर देखा नहीं है, स्वयं को समझा ही नहीं है।

जी कृष्णमूर्ति

जो बाइडन | अमेरिकी राष्ट्रपति

हम उन साठ लाख यहूदियों के कत्लेआम को याद कर आज भी गमगीन हैं, जो नाजियों की बर्बरता के शिकार बने थे। 'वैसा फिर कभी न हो', इसकी जिम्मेदारी भी हम बखूबी समझते हैं।

आम लोगों के मुद्दे नहीं उठाए जा रहे

आज, यानी 7 मई को मतदान का तीसरा चरण है। इसके बाद चार चरणों की वोटिंग बाकी है, जिसके लिए चुनाव प्रचार जोरदार तरीके से चल रहा है। सभी दल और नेता एक-दूसरे को घेरने का प्रयास कर रहे हैं। आरोपों-प्रत्यारोपों का खेल अनवरत जारी है। हालांकि, आम लोगों की यही उम्मीद होती है कि चुनाव के दौरान नेतागण मुद्दे की ही बात करें, काम की चर्चा करें और देश के भविष्य की झलक दिखाएं, लेकिन ऐसा लग रहा है कि अब ज्यादातर चुनावों में जनहित के मुद्दे उठते ही नहीं। ले-देकर धर्म और जाति की बातें ही हावी हैं, जो किसी भी लोकतंत्र की बेहतरी के लिहाज से अच्छी तस्वीर नहीं हो सकती है।

इस बार के आम चुनाव में जहां भारतीय जनता पार्टी खुले तौर पर कांग्रेस पर मुस्लिम तुष्टिकरण का आरोप लगा रही है और दावा कर रही है कि कांग्रेस ओबीसी का आरक्षण घटाकर मुसलमानों को दे सकती है, वहीं कांग्रेस की ओर से दावा किया जा रहा है कि भाजपा आरक्षण और संविधान, दोनों को खत्म करने की कोशिश में है। उसके मुताबिक, फिर से भाजपा सरकार बनते ही देश का संविधान बदल दिया जाएगा। सिर्फ यही दावे-प्रतिदावे नहीं हो रहे। कांग्रेस पर यह आरोप भी लगाया जा रहा है कि यदि उसकी सरकार बनी, तो वह लोगों से विरासत टैक्स वसूल करेगी और उनके मंगलसूत्र तक हड़प लेगी, जबकि इसके विरोध में दावा किया जा रहा है कि भाजपा ने तो अभी ही लोगों को गरीब बना दिया है। इन मुद्दों के बीच में भगवान राम को भी शामिल कर लिया गया है और लोगों में यह कहकर जोश भरने का प्रयास किया जा रहा है कि भगवान राम को लाने वाले को जिताया जाएगा और रामलला के प्राण-प्रतिष्ठा समारोह से दूर रहने वालों को हराया जाएगा। हालांकि, कभी-कभी विकास के दावे-प्रतिदावे को लेकर भी आवाज उठाई जाती है, लेकिन जितना महत्व जाति-धर्म के मुद्दे को दिया जा रहा है, उतना उनको नहीं मिल रहा।

चूंकि चुनाव में उसी दल को जीत मिलती है, जो लोगों की भावनाओं को छू पाता है, इसीलिए इस बार के चुनाव में भी अपने-अपने तरीके से भावनात्मक मुद्दे उठाए जा रहे हैं। मगर ऐसा लगता है कि भावनात्मक मुद्दों के शोर में जरूरी मुद्दे गायब हो गए हैं। यह ठीक नहीं है। बेशक, हर राजनीतिक दल यही चाहता है कि किसी न किसी तरह से वह चुनाव जीत जाए, लेकिन मतदाताओं को जागरूक करना भी उसी की जिम्मेदारी है। वाजिब मुद्दों पर यदि सभी पार्टियां चुनाव लड़ेंगी, तो हमारा लोकतंत्र और भी समृद्ध व परिपक्व होगा।

शैलेंद्र कुमार चतुर्वेदी, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम
चुनाव के मुद्दे

इस चुनाव में जनहित के मसले हावी

अठारहवीं लोकसभा के चुनाव को यह कहकर खारिज नहीं किया जा सकता कि इसमें जरूरी मुद्दे नहीं उठाए जा रहे हैं। क्या आलोचकों को यह नहीं दिख रहा है कि भारतीय जनता पार्टी विकास के नाम पर वोट मांग रही है? उसने पिछले दस वर्षों में देश में कितना बदलाव किया है, उसका हिसाब-किताब जनता के बीच परोस रही है और उसी के आधार पर अपने उम्मीदवारों के लिए जीत का आशीर्वाद मांग रही है। कांग्रेस की चुनावी-रणनीति भी विकास के इर्द-गिर्द ही है। वह बेरोजगारी, गरीबी, महंगाई, अमीरों की कर्जमाफी जैसे जरूरी मुद्दों के साथ जनता के बीच जा रही है। क्या ये मुद्दे जनहित के नहीं हैं? गरीबी और महंगाई तो सीधे-सीधे आम लोगों से जुड़ा मसला है। मौजूदा सरकार के कार्यकाल में कितना विकास हुआ या महंगाई कितनी बढ़ी, इस बहस में यदि हम न भी जाएं, तब भी यह साफ-साफ दिख रहा है कि एक पार्टी अपने कामों के आधार पर लोगों से वोट मांग रही है, तो दूसरी पार्टी गलत नीतियां अपनाने के कारण उस दल को घेरने के प्रयास कर रही है।

हां, यह सही है कि धर्म और जाति भी कुछ हद तक चुनावी मुद्दों में शामिल हैं, लेकिन ये मुद्दे तो भारतीय चुनाव के अभिन्न अंग जैसे हैं। शुरू से ही भारत में धर्म और जाति के आधार पर चुनाव लड़े जाते रहे हैं। अलबत्ता, हाल के वर्षों में इसमें कमी आई है और विकास जैसे मुद्दे हावी हुए हैं। इस बार भी बेशक धर्म और जाति की बातें हो रही हैं, लेकिन यह दाल में एक छौंक की तरह है। पूरी दाल तो विकास और जनहित के मुद्दों की ही पक रही है।

असल में, दिक्कत यह है कि भारतीय मतदाताओं का एक बड़ा वर्ग अब भी इतना जागरूक नहीं हुआ है कि वह राष्ट्रीय मुद्दों को लेकर बहुत अधिक आग्रही बन सके। कुछ मतदाता जरूर राष्ट्र की सोचते हैं, लेकिन ज्यादातर लोग चुनाव में अपना फायदा ही देखते हैं। यही कारण है कि चुनाव के दौरान हम कई मतदाताओं को उस दल के लिए वोट डालते देखते हैं, जो उनको पैसे देते हैं या उनके लिए रेवड़ी संस्कृति को बढ़ावा देते हैं। यही कारण है कि धर्म और जाति से जुड़े भावनात्मक मुद्दे भी उठाए जाते हैं, ताकि लोगों के दिलों को टटोलकर उनको अपने पक्ष में किया जा सके। हालांकि, अच्छी बात यह है कि समझदार वोटरों की संख्या बढ़ रही है और वे सिर्फ धर्म और जाति के आधार पर ही अपना मत नहीं गिराते। इसी कारण इस बार भी विकास का मुद्दा हावी है। इसी आधार पर वोट मांगे जा रहे हैं।

ज्योति कुमारी, टिप्पणीकार

कल्पमेधा

अपना नाम सदा कायम रखने के लिए मनुष्य बड़े से बड़ा जोखिम उठाने, धन खर्च करने, हर तरह के कष्ट सहने और यहां तक कि मरने के लिए भी तैयार हो जाता है।

– सुकरात

घाटी में आतंक

घाटी में दहशतगर्दी पर काफी हद तक काबू पा लेने के सरकारी दावे के बरक्स हकीकत यह है कि पिछले कुछ सालों में वहां आतंकी हमले बढ़े हैं। पुंछ के शाहसितार इलाके में वायुसेना के वाहन पर हुआ हमला इसकी ताजा कड़ी है। शनिवार को घात लगा कर आतंकियों ने हमला किया था, जिसमें पांच सैनिक गंभीर रूप से घायल हो गए। बाद में उनमें से एक ने अस्पताल में दम तोड़ दिया। आतंकियों की तलाश जारी है। हेलिकाप्टर से भी उनकी टोह ली जा रही है। बताया जा रहा है कि ये आतंकी पाकिस्तान से आए थे। उनमें से दो आतंकियों के रेखाचित्र जारी कर उनके बारे में जानकारी देने वाले को बीस लाख रुपए इनाम की घोषणा भी कर दी गई है। सरकार लगातार कहती आ रही है कि घाटी में आतंकवादियों की गतिविधियों को समेट दिया गया है। अब वे एक सीमित क्षेत्र में सक्रिय रह गए हैं। उन्हें भी जल्दी खत्म कर दिया जाएगा। मगर हैरानी की बात है कि सरकार के इस दावे को धता बताते हुए आतंकी लगातार कभी लक्षित हिंसा करके ध्यान भटकाने, तो कभी सेना के काफिले पर घात लगा कर हमला करने में कैसे कामयाब हो जा रहे हैं।

चिंता की बात यह भी है कि आतंकी उन इलाकों में भी सक्रिय देखे जा रहे हैं, जहां वर्षों से लगभग शांति थी। पीर-पंजाल के इलाके में फिर से आतंकियों का सक्रिय हो जाना पाकिस्तान की तरफ से मिल रही गंभीर चुनौती की तरह है। ताजा हमला उसी इलाके में हुआ है। वह पाकिस्तान से सटा घने जंगलों और चट्टानों वाला दुर्गम इलाका है। भारतीय सेना ने बहुत पहले उस इलाके में पाकिस्तान पोषित आतंकी गतिविधियों पर विराम लगा दिया था। यह पिछले एक पखवाड़े में तीसरी आतंकी घटना है। इसके पहले आतंकियों ने दो स्थानीय नागरिकों की गोली मार कर हत्या कर दी थी। इसके पहले सेना और पुलिस ने कुछ तलाशी अभियानों में आतंकवादियों को मार गिराया था। ये हमले उन्हीं की प्रतिक्रिया में किए गए लगते हैं। मगर इन घटनाओं से यह भी जाहिर है कि सेना और सुरक्षाबलों को दहशतगर्दों की रणनीति समझने में चूक हो रही है। वे समय-समय पर अपनी रणनीति बदलते रहते हैं। कई बार वे लक्षित हिंसा का सहारा केवल इसलिए लेते हैं कि ध्यान भटकाया जा सके। फिर वे घात लगा कर सेना के काफिले पर हमला इस मकसद से करते हैं कि अधिक से अधिक नुकसान पहुंचा सके। बार-बार हो रहे ऐसे हमले गंभीर चिंता का विषय हैं।

जम्मू-कश्मीर का विशेष दर्जा समाप्त करने और सेना की तैनाती बढ़ाने के बाद दावे किए गए थे कि जल्दी ही घाटी से दहशतगर्दी को नेस्तनाबूद कर दिया जाएगा। अब जब आतंकवादियों को मिलने वाले वित्तीय, स्थानीय और हर तरह के सहयोग पर अंकुश लगाया जा चुका है, पहले की तुलना में खुफिया तंत्र अधिक सक्रिय है, तब भी अगर आतंकवादी न केवल सुरक्षाबलों को चकमा देने में कामयाब हो जा रहे हैं, बल्कि उनकी सक्रियता लगातार बनी हुई है, तो इस विषय में नए सिरे से विचार करने की जरूरत है। जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद तीन सौ सत्तर को खत्म हुए भी पांच वर्ष होने को आ रहे हैं। अभी तक वहां विधानसभा चुनाव कराने में अड़चनें दूर नहीं हो पा रहीं। अगर इन घटनाओं के पीछे पाकिस्तान का हाथ है, तो उससे निपटने की रणनीति बनानी चाहिए।

भ्रष्टाचार के तहखाने

लंबे समय से देश भर में काले धन के खिलाफ अभियान चल रहा है। जांच एजंसियां लगातार सक्रिय हैं। मगर तमाम कवायदों के बावजूद इस समस्या से पार पाना बड़ी चुनौती बनी हुई है। सोमवार को प्रवर्तन निदेशालय यानी ईडी ने झारखंड की राजधानी रांची में राज्य सरकार में मंत्री आलमगीर आलम के निजी सचिव के घरेलू सहायक के घर छापेमारी की, जिसमें पैंतीस करोड़ रुपए से ज्यादा की नकदी बरामद हुई। खबर के मुताबिक, यह छापेमारी झारखंड ग्रामीण विकास विभाग के मुख्य अभियंता से जुड़े मामले में हुई है, जिसे ईडी ने पिछले वर्ष धनशोधन के मामले में गिरफ्तार किया था। धनशोधन का सिरा मंत्री के निजी सचिव और उसके घरेलू सहायक से भी जुड़ा हुआ था, इसलिए ईडी ने उसे जांच और कार्रवाई के दायरे में लिया। सवाल है कि इतनी बड़ी रकम काले धन के रूप में किसी के घर में पड़ी थी, तो इस तरह का भ्रष्टाचार बिना किसी उच्च स्तरीय संरक्षण के चलना कैसे संभव है!

सवाल यह भी है कि भ्रष्टाचार और काले धन के खिलाफ अभियान चलाने और इसके खात्मे के लिए हर स्तर पर कार्रवाई करते हुए पिछले आठ-वर्षों में जितने वादे और दावे किए गए, उसके मुकाबले कामयाबी कहां दिखती है! आखिर क्या वजह है कि हर कुछ दिनों बाद किसी नेता या अधिकारी के घर या दफ्तर में छापे मारे जाते हैं, वहां से करोड़ों रुपए नगद बरामद होते हैं? समझना मुश्किल है कि जांच एजंसियों की सघन कार्रवाइयों के बीच दीवार फोड़ कर कहां से इतनी भारी मात्रा में नगदी निकल आती है? क्या वजह है कि काले धन पर काबू पाने के लिए बनाए गए कायदे-कानून को लेकर सख्ती के दावों के बावजूद भ्रष्ट आचरण में लिप्त नेता या अफसर को कई-कई करोड़ रुपए नगद अपने घरों में छिपा कर रखने में कोई खौफ नहीं होता? कहा जा सकता है कि सरकारी एजंसियां भ्रष्टाचार और काले धन की समस्या को खत्म करने को लेकर सक्रिय हैं। मगर यह भी सच है कि भ्रष्टाचार के खिलाफ जंग छेड़ने और संबंधित महकमों या एजंसियों की अति-सक्रियता के बावजूद इस समस्या पर काबू पाना आज भी मुश्किल साबित हो रहा है।

बदहाली से उबर नहीं पा रही किसानी

किसानों के सामने हमेशा संकट बना रहता है। प्राकृतिक आपदा या अन्य किसी कारण से फसल बर्बाद हो गई तो खेती के लिए लिया गया कर्ज न चुका पाने के कारण किसानों के सामने रोटी के भी लाले पड़ जाते हैं।

रवि शंकर

भारत जैसे कृषिप्रधान देश में किसान की हालत देखकर देश के विकास संबंधी दावे बेमानी लगते हैं। इसका बड़ा कारण है कि सरकारों को किसानों पर जितना ध्यान देना चाहिए, उतना नहीं दिया गया। इस समय लोकसभा चुनाव की सरगर्मी है और हर दल ने अपने-अपने घोषणापत्र में किसानों के लिए ढेरों वादे किए हैं। मगर दूसरी तरफ हकीकत यह है किसान अपनी मांगें लेकर आंदोलन कर रहे हैं।

सरकार ने 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने का वादा किया था। न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) लागू करने का वचन दिया था। मगर वादे केवल वादे बनकर रह गए। हमारे देश में अब भी किसानों की औसत आय इतनी कम है कि उससे उनका भरण-पोषण नहीं हो पाता। विडंबना है कि भारत में अन्नदाता की आमदनी सरकारी विभाग के मामूली कर्मचारी से भी कम है। सरकार की तमाम कोशिशों और दावों के बावजूद देश के किसानों की हालत में कोई सुधार नहीं दिख रहा है। उनकी इस बदहाली के पीछे कहीं न कहीं सरकारी नीतियां ही जिम्मेदार हैं, जहां कृषि को कभी देश के विकास की मुख्यधारा का मानक समझा ही नहीं गया।

बीज, खाद, कीटनाशक आदि के नाम पर छिटपुट सबसिडी और कृषि ऋण के अलावा किसानों के लिए आज भी कोई विशेष सरकारी सुविधा नहीं है। यही वजह है कि किसानों के सामने हमेशा संकट बना रहता है। प्राकृतिक आपदा या अन्य किसी कारण से फसल बर्बाद हो गई तो खेती के लिए लिया गया कर्ज न चुका पाने के कारण किसानों के सामने रोटी के भी लाले पड़ जाते हैं। फिर उनकी निराशा आत्महत्या तक ले जाती है। वहीं जरूरत से ज्यादा उत्पादन भी आफत का कारण बन जाता है, क्योंकि तब फसल का उचित मूल्य नहीं मिल पाता और उसे उन्हें औने-पौने दामों में बेचना पड़ता है। अगर उत्पादन अधिक हो जाए तो भी सरकार किसी न किसी बात का रोना रोने लगती है और कम रहे तब भी रोती है।

भारत में तकरीबन साठ फीसद आबादी कृषि क्षेत्र पर निर्भर है। इसलिए देश में कृषि एवं किसानों की भूमिका से कोई भी सरकार मुंह नहीं मोड़ सकती। जहां तक कृषि सुधारों का प्रश्न है, देश के किसानों समेत सभी सरोकार रखने वाले पक्ष इस बात पर एकमत हैं कि किसानों की आर्थिक स्थिति में तुरंत सुधार हो। देश की राजनीति को किसानों के प्रति अपना दृष्टिकोण बदलना पड़ेगा। इसके लिए किसानों और राजनीतिक पार्टियों, दोनों को ही अपना दृष्टिकोण बदलना होगा।

दुर्भाग्यवश, किसानों को मात्र एक वोट बैंक के रूप में देखा जाता है और किसानों की विडंबना यह है कि वे आसानी से इस बात को स्वीकार कर लेते हैं। इसके चलते किसान हित किसान राजनीति में गौण हो जाता है। इसके लिए सभी को राष्ट्रहित में अपना नजरिया बदलने की आवश्यकता है। किसान मात्र वोट बैंक से कहीं अधिक भारतीय अर्थव्यवस्था की धुरी हैं, जिनका विकास राष्ट्रीय संपन्नता का आधार है। इसलिए राजनीतिक स्वार्थ से ऊपर उठ कर सभी को खेती-किसानी की हकीकत से रूबरू होना होगा। उनके हालात सुधारने के लिए राजनीति से बाहर आकर फैसले करने होंगे।

यह ठीक है कि सरकार ने किसानों की आय बढ़ाने के लिए अनेक योजनाएं चलाई हैं। फिर भी उनकी आर्थिक स्थिति किसी से छिपी नहीं है। पिछले दो दशक में जो भी सरकारें आईं, उन्होंने कृषि क्षेत्र पर उचित ध्यान नहीं दिया। बेशक, कृषि क्षेत्र के लिए कई परियोजनाएं शुरू की गईं, लेकिन उनका क्रियान्वयन ठीक ढंग से नहीं किया गया। राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय खाद्यान्न सुरक्षा मिशन, राष्ट्रीय बागबानी मिशन जैसी कई योजनाएं चल रही हैं, लेकिन सही तरीके से क्रियान्वयन न होने की वजह से किसानों को उनका जितना लाभ मिलना चाहिए उतना नहीं मिल पा रहा है। इससे भी बड़ी विडंबना है कि सरकार द्वारा संचालित कई योजनाओं के बारे में तो किसानों को पता तक नहीं है। यानी कागज पर योजनाएं तो हैं, लेकिन किसानों की पहुंच से दूर हैं।

> बेशक, कृषि क्षेत्र के लिए कई परियोजनाएं शुरू की गईं, लेकिन उनका क्रियान्वयन ठीक ढंग से नहीं किया गया। राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय खाद्यान्न सुरक्षा मिशन, राष्ट्रीय बागबानी मिशन जैसी कई योजनाएं चल रही हैं, लेकिन सही तरीके से क्रियान्वयन न होने की वजह से किसानों को उनका जितना लाभ मिलना चाहिए उतना नहीं मिल पा रहा है। इससे भी बड़ी विडंबना है कि सरकार द्वारा संचालित कई योजनाओं के बारे में तो किसानों को पता तक नहीं है। यानी कागज पर योजनाएं तो हैं, लेकिन किसानों की पहुंच से दूर हैं।

अक्सर यह बात कही जाती है कि हमारी अर्थव्यवस्था सबसे चमकदार अर्थव्यवस्थाओं में एक है। मगर चमकदार अर्थव्यवस्था में किसानों की स्थिति आज भी दयनीय बनी हुई है। इस सच्चाई को कोई सरकार स्वीकार करना नहीं चाहेगी। भले ऊंची विकास दर अर्थव्यवस्था की गतिशीलता का पैमाना हो, मगर खाद्य असुरक्षा को लेकर कृषि प्रधान देश की ऐसी दुर्दशा निश्चित ही गंभीर बात है। दूसरी तरफ, देश की आबादी एक अरब इकतालीस करोड़ से ऊपर जा चुकी है। 'द मिलेनियम प्रोजेक्ट' की रपट में कहा गया है कि 2040 तक भारत की आबादी लगभग एक अरब सत्तावन करोड़ हो जाएगी। ऐसे में सभी को भोजन उपलब्ध कराना एक बड़ी चुनौती होगी। क्योंकि कृषि क्षेत्र जिस घोर संकट में फंसा हुआ है, उसका एक बड़ा कारण किसानों का खेती से होता मोहभंग है।

किसानी और किसान कितनी मुश्किलों से गुजर रहे हैं, यह जानने के लिए किसी अध्ययन या शोध की जरूरत सरकार को नहीं होनी चाहिए। बरसों से देश के अलग-अलग हिस्सों से किसानों द्वारा आत्महत्या की खबरें आती रही हैं, तो दूसरी तरफ तेजी से खेती से विमुख हो रहे लोगों की संख्या भी लगातार बढ़ रही है। इन हालात में, खासकर तब जबकि बेलगाम आबादी के लिए मंडराते खाद्यान्न संकट के मद्देनजर सरकार एक और हरित क्रांति की जरूरत पर जोर दे रही है, अगर भारतीय कृषि और किसान को गहरे संकट से उबारना है, तो कुछ बड़े और कड़े फैसले सरकार को करने पड़ेंगे। भले पिछले दशक में कृषि क्षेत्र के लिए ऋण में चाहे जितना इजाफा किया गया हो, पर आज भी छोटे और सीमांत किसान अपनी जरूरतों की पूर्ति के लिए सेठ-साहूकारों की ही मदद लेते हैं। ऐसा लगता है कि बैंकों की ऋण सुविधाओं का अधिकतर लाभ वही किसान उठा पा रहे हैं, जो कर्ज चुकाने की स्थिति में हैं। अगर किसानों को खेती से लाभ दिलाने के लिए दीर्घकालिक उपायों पर गंभीरता से विचार नहीं किया गया, तो स्थिति भयानक हो सकती है।

साफ है, खेती में लागत बढ़ने और उचित मूल्य न मिल पाने से देश के किसानों की माली हालत ठीक नहीं है। इसलिए खेती अब किसानों के लिए लाभप्रद व्यवसाय नहीं रह गई है और खेती से मोहभंग के कारण वे लगातार वैकल्पिक रोजगार तलाश रहे हैं। अगर किसानों और कृषि के प्रति संजीदगी नहीं दिखाई गई, तो वह दिन दूर नहीं, जब हम खाद्य असुरक्षा की तरफ तेजी से बढ़ जाएंगे। आयातित अनाज के भरोसे खाद्य सुरक्षा की गारंटी नहीं दी जा सकती। साथ ही, इस देश के किसानों को आर्थिक उदारवाद के समर्थकों की सहानुभूति की जरूरत नहीं है। अगर देश की हालत सुधारनी और गरीबी मिटानी है, तो कृषि क्षेत्र की हालत सुधारना सबसे जरूरी है। इसके बिना देश का विकास नहीं हो सकता है।

अंक नहीं जीवन

सुधा रानी तैलंग

इस वर्ष एक बार फिर बोर्ड परीक्षाओं के नतीजे सुर्खियों में रहे। इसमें अच्छी और सुहानी लगने वाली बातों के समांतर अंकों और 'रैंक' को ही जीवन का सब कुछ समझने वाली आज की पीढ़ी के बीच से परीक्षा में असफलता के भय होने, ग्रेड या रैंक कम आने, अपने आपको माता-पिता और शिक्षकों की आशा के अनुरूप खरा साबित न होने पर आत्महत्या किए जाने की खबरें भी आईं। यह निश्चित ही बेहद चिंता का विषय है। परीक्षाओं के नतीजे आने के बाद बच्चों के बीच से आत्महत्या की घटनाएं आमतौर पर हर वर्ष देखने में आती हैं, पर इसका कुछ समाधान अभिभावक, शिक्षक और प्रशासन निकाल नहीं पाते हैं और न ही ऐसी स्थिति बनाई जाती है कि आज के बच्चे इस पर विचार करें कि कामयाबी अगर अच्छा है तो कम अंक या नाकामी खुद को बेहतर करने और अगली कामयाबी का रास्ता है। बच्चों को यह क्यों नहीं समझाया जा सकता है कि क्या जीवन का लक्ष्य केवल परीक्षा ही पास करना है! अगर अंक कम आ गए या नतीजे खराब रहे तो जीवन तो खत्म नहीं हो जाता। जीवन के मुकाम कुछ और करके भी हासिल किए जा सकते हैं। मगर भविष्य मानो स्कूली परीक्षा में ज्यादा से ज्यादा अंकों के दायरे में ही कैद कर दिया जाता है और अभिभावक से लेकर विद्यार्थी तक इसी चक्र में अपना सोचना-समझना केंद्रित कर लेते हैं। इसके मनोवैज्ञानिक प्रभाव तो सामने आने ही हैं।

देखा जाए तो आज के स्कूली शिक्षा के समूचे ढांचे में पढ़ाई से लेकर परीक्षा और नतीजे के बीच दिखावे की संस्कृति में बच्चों के अभिभावक ही ज्यादा जिम्मेदार नजर आते हैं, जो अपनी अधूरी महत्त्वाकांक्षाओं की भूख की वजह से बच्चों पर दबाव बनाते हैं कि वे नब्बे या सौ फीसद अंक नहीं लाएं। सबसे अव्वल आएं। वहीं स्कूलों में भी बच्चों पर दबाब बनाया जाता है। ऐसे में स्कूल की कक्षाओं के अलावा ट्यूशन, कोचिंग, परीक्षा के तनाव और बोझ के साथ इंटरनेट, टीवी के चक्रव्यूह में फंसे बच्चे दिग्भ्रमित हो जाते हैं। जबकि पढ़ाई के बाद बेहतर भविष्य बनाने के लिहाज से देखें तो उसमें अंकों के निर्धारण का कोई आकलन नहीं होता है। बढ़ती महत्त्वाकांक्षा के चलते बच्चे तीन घंटे की परीक्षा में पूरे साल की पढ़ाई का, अपनी योग्यता का सही प्रदर्शन नहीं कर पाते हैं।

इस स्थिति की जटिलता का अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि कहां एक समूचा व्यक्तित्व बनने के लिए बच्चे अपना जीवन-सफर शुरू करते हैं और फंस जाते हैं ज्यादा से ज्यादा नंबर लाने और अव्वल लाने की होड़ में। इस होड़ का हासिल यह है कि जिन बच्चों को पढ़ना, खेलना-कूदना और आनंद उठाना था, उनमें से कई पढ़ाई से उपजे तनाव और हताशा के चलते आत्महत्या करने से भी नहीं चूक रहे। दिखावे के अंको का छलावा बाल मन को लगातार आकर्षित कर रहा हैं। बच्चे बोर्ड परीक्षाओं के नतीजों को ही अपने जीवन की आधारशिला, अंतिम सच, करियर का सब कुछ मान बैठे हैं। जबकि यही अंतिम सच नहीं है। सच यह है कि अंकों का जीवन में कोई मूल्य नहीं हैं, क्योंकि अंकों या डिग्री से किसी की भी योग्यता का सही मूल्याकंन नहीं किया जा सकता। कितने ही आइएएस, कलेक्टर, खिलाड़ी, अभिनेता, गायक, कारोबारी, कलाकार, लेखक, साहित्यकार, वैज्ञानिक आदि में बेहद साधारण किस्म के विद्यार्थी रहे। वे पढ़ाई में कक्षा में अव्वल दर्जे में नहीं आए, फेल भी हुए, स्नातक, स्नातकोत्तर की डिग्री भी नहीं ली, फिर भी आगे जाकर वे अपने-अपने क्षेत्र में एक नया मुकाम हासिल कर देश का नाम रोशन कर रहे हैं। उनसे आज की पीढ़ी सीख ले तो वह भी अंकों से जीवन की हार-जीत को भूल कर करिअर को बनाने में अपनी प्रतिभा, योग्यता और रुचि के अनुसार पढ़ाई के अलावा खेल, गीत-संगीत, पेंटिग, व्यवसाय, अभिनय, किसी दूसरे क्षेत्र में मुकाम हासिल कर सकती है। बच्चों को चाहिए कि वे असफलताओं से भी सीख लें। एक अच्छा और बेहतर इंसान बनने का प्रयास करें।

यह ध्यान रखने की जरूरत है कि लगातार मेहनत, धैर्य, आत्मविश्वास और संकल्प से सफलता हासिल की जा सकती हैं। अगर सफलता न भी मिले तो हिम्मत नहीं हारना चाहिए। दुबारा प्रयास करना चाहिए। बच्चे हंसें, खिलखिलाएं और अर्जुन की तरह लक्ष्य के प्रति केंद्रित रहें, तो कभी न कभी सफलता जरूर हाथ लगेगी। ऐसे तमाम आंकड़े दर्शाते हैं कि आज के बच्चे किस तरह की महत्त्वाकांक्षा के शिकार हो गए हैं। उनके सपने बड़े हैं और उनके पूरे न होने पर वे मौत को गले लगाने में भी नहीं चूकते! सवाल है कि उनको समाज या स्कूल के स्तर पर इस तरह की सोच को गले लगाने की 'सीख' कहां से मिलती है? उनकी समय पर काउसिलिंग कराई जाए, सलाह दी जाए, शिक्षक, परिवार वाले उन्हें कुछ समझाएं तो बच्चे आत्महत्या करने के फैसले तक शायद नहीं पहुंचें।

वहीं संयुक्त परिवारों के विघटन, कामकाजी माता-पिता के व्यस्त जीवन की दिनचर्या से बालमन एकाकी और उपेक्षित होता जा रहा हैं। प्रतिस्पर्धा के दौर में आगे बढ़ने की चाहत में आज अंकों और रैंक का खेल जीवन का खेल बन चुका हैं। इन आत्महत्याओं के बढ़ते ग्राफ का आखिर जिम्मेदार कौन है? आज की शिक्षा प्रणाली, प्रशासन, माता-पिता, सामाजिक परिवेश या आधुनिक संस्कृति। इस पर हमें निश्चित ही गंभीर चिंतन-मनन करना होगा।

दुनिया मेरे आगे

> तमाम आंकड़े दर्शाते हैं कि आज के बच्चे किस तरह की महत्त्वाकांक्षा के शिकार हो गए हैं। उनके सपने बड़े हैं और उनके पूरे न होने पर वे मौत को गले लगाने में भी नहीं चूकते! सवाल है कि उनको समाज या स्कूल के स्तर पर इस तरह की सोच को गले लगाने की 'सीख' कहां से मिलती है?

हाशिये पर मजदूर

मजदूर दो वक्त की रोटी के लिए क्या-क्या नहीं करते हैं? जो मजदूर मुख्य रूप से दैनिक मजदूरी पर निर्भर हैं, उनके पास अपनी आजीविका के लिए काम की तलाश में शहरों की ओर पलायन करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। अगर मजदूरों को उनके गांवों में पर्याप्त वैकल्पिक श्रम कार्य मिलेगा तो वे शहरों की ओर क्यों पलायन करेंगे? इसमें कोई संदेह नहीं है कि सभी शहरों में अन्य रोजगार के अलावा होटल, सब्जी और थोक बाजार, फुटपाथी विक्रेता जैसे श्रमिक कार्य होते हैं और इमारतों, व्यावसायिक परिसरों, सड़क, जल निकासी कार्यों और कई दैनिक नौकरियों के निर्माण में लाखों श्रमिकों की आवश्यकता होती है। आवश्यक श्रम शक्ति, दुनिया के किसी भी देश का विकास सरकार की योजनाओं को लागू करने में श्रमशक्ति की मदद के बिना सफल नहीं हो सकता है। कोरोना काल में ऐसा लगता था कि इस देश में मजदूरों के लिए कोई नहीं है। मजदूरों के पास औरों की तरह कोई पुश्तैनी जमीन, संपत्ति नहीं होती है कि वह विषम परिस्थितियों में उसे बेचकर जीवनयापन कर सके। मजदूरों को काम नहीं मिलने का मतलब उसे और उसके परिवार को भूखे रहने की गारंटी।

– प्रसिद्ध यादव, बाबूचक, पटना

दावे और हकीकत

लोकतंत्र के इस महापर्व में एक बार फिर अलग-अलग पार्टियों ने चुनाव में महिलाओं को प्रत्याशी बनाने में उचित प्रतिनिधित्व न देकर यही बताया है कि महिलाओं के प्रतिनिधित्व के मुद्दे पर उनका सरोकार कितना ईमानदार है। सत्तारूढ़ भाजपा ने पिछले साल नारी शक्ति वंदन अधिनियम पारित कराया, मगर 'नारी शक्ति वंदन' के लिए टिकट देने के मसले पर उत्साह ठंडा क्यों पड़ जाता है? जबकि लोकतंत्र के इस पर्व में महिलाएं मतदान में अपनी भागीदारी से पुरुषों को लगातार पीछे छोड़ती चली आई हैं। इस आम चुनाव में पार्टियों की बात करें तो ओड़ीशा को छोड़कर किसी ने भी आठ फीसद से अधिक महिला उम्मीदवारों को टिकट नहीं दिया है। महिलाओं की समानता के लिए बड़ी-बड़ी बातें करने वाले समाज की मानसिकता पितृसत्तात्मक वैचारिकी से मुक्त नहीं हो पाई है। इसीलिए सभी राजनीतिक पार्टियां आधी आबादी के प्रति निराशाजनक रवैया अपनाती हैं।

– माम चंद सागर, रजोकरी, दिल्ली

आग का दायरा

'जंगल में आग' (संपादकीय, 29 अप्रैल) पढ़ा। पिछले कुछ सालों से जंगल में आग लगने की घटनाओं में काफी इजाफा हुआ है। अब उत्तराखंड में काफी जंगल खाक हो चुका है। यों तो जंगलों में आग की घटनाएं अब वर्ष भर होती रहती हैं, मगर गर्मी में कुछ ज्यादा घटती हैं, जिनमें काफी नुकसान होता है। पर्वतीय राज्य उत्तराखंड में जंगल की आग लगने की घटना हो या फिर आस्ट्रेलिया के जंगलों की आग हो या अमेजन के जंगलों की, काफी पेड़ जलकर खाक हो जाते हैं। जैविक विविधता नष्ट हो जाती है और जनजीवन भी खतरे में पड़ जाता है। आज जरूरत है जंगलों की आग को रोकने की। इससे निपटने के लिए पुख्ता व्यवस्था करनी होगी, क्योंकि वनों को बचाना हमारी प्रथम प्राथमिकता होनी चाहिए। हर साल लगने वाली आग से कोई सबक नहीं लिया जाता। नतीजतन हर साल जंगल धधक जाते हैं। आग लगने से पहले ही इससे निपटने की व्यवस्था करनी चाहिए।

– साजिद अली, चंदन नगर, मप्र

बदलाव की बयार

आतंकवादी घटनाओं, निर्दोष हिंसा, राजनीतिक स्वार्थ से उथल-पुथल झेल रहा कश्मीर इन दिनों कहने को शांत लग रहा है, जहां शैक्षणिक, चिकित्सा, निर्माण के क्षेत्र में आधार तैयार हो रहे बताए जा रहे हैं। निश्चित रूप से यह राष्ट्र की मुख्यधारा में लौटते कश्मीर की तस्वीर लग सकती है। मगर वास्तव में कश्मीर के हालात अगर बिगड़ रहे हैं तो वहां के नेताओं की बदजुबानी से, जो कहते कुछ और करते कुछ और हैं। यहां महबूबा मुफ्ती का वक्तव्य गौर करने लायक है, जिसमें वे कश्मीरी पंडितों की कश्मीर वापसी और सद्भाव से रहने की बात करती हैं, मगर नेपथ्य में पंडितों की हत्याओं पर राजनीति करने से भी नहीं चूकतीं। निश्चित रूप से राज्य के नेताओं की लापरवाहियों का खमियाजा कश्मीर को भुगतना पड़ा है, जिन्हें केवल भारतीय कानून ही ठीक कर सकता है।

– अमृतलाल मारू 'रवि', इंदौर

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

नई दिल्ली

www.readwhere.com

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। मंगलवार, 7 मई 2024

मिलावट की मार

भारतीय मसालों की गुणवत्ता को लेकर जब दुनिया में बहस छिड़ी हुई है, तब दिल्ली में मिलावट के एक बड़े खेल का उजागर होना खास तौर पर चिंताजनक है।

विदेश में बैन | कुछ दिनों पहले ही हॉन्गकॉन्ग और सिंगापुर ने लिमिट से ज्यादा पेस्टिसाइड का आरोप लगाकर दो भारतीय ब्रैंड के कुछ मसालों को बैन किया था। ऐसी खबरें भी आ रही थीं कि FSSAI ने मसालों में 10 गुना अधिक कीटनाशक के इस्तेमाल की अनुमति दी है। हालांकि अथॉरिटी ने इससे इनकार किया है। लेकिन ऐसे समय में दिल्ली से आई मिलावटी मसालों की खबर संदेह को गहरा करती है।

कड़ी सजा का प्रावधान ज़रूरी

मिलावट का धंधा | भारत में मिलावट का मामला मसालों तक सीमित नहीं है। मिलावटखोरों ने तेल, घी, मिठाइयों से लेकर अनाज तक, किसी चीज को नहीं छोड़ा है। हर साल त्योहारों पर देशभर से मिलावटी मावा और मिलावटी मिठाइयों की खबरें आती हैं।

बांग्लादेश से सबक | मिलावट का कारोबार अगर फल-फूल रहा है, तो जाहिर है कि इसके खिलाफ जंग उस पैमाने पर नहीं हो रही, जैसी होनी चाहिए। यहां भारत अपने पड़ोसी बांग्लादेश से कुछ सबक ले सकता है, जिसने हल्दी में लेड की मिलावट पर काबू पा लिया। मिलावटखोर हल्दी की चमक बढ़ाने के लिए लेड का इस्तेमाल करते हैं और यह समस्या पूरे दक्षिण एशिया की है।

कड़े कदम | बांग्लादेश ने साल 2019 में इस समस्या पर फोकस किया। कानून कड़े किए गए। नए कानूनों और मिलावटखोरों को मिली सजा के बारे में आम लोगों को बताया गया। 50 हजार पब्लिक नोटिस लगाए गए और बड़े पैमाने पर जागरूकता अभियान चलाया गया।

सेहत पर भारी | मिलावटी खाद्य पदार्थ धीमे जहर की तरह हैं। ये दिल और दिमाग से जुड़ी बीमारियों, अल्सर, कैंसर वगैरह की वजह बन सकते हैं। खाने वालों को आभास भी नहीं होता कि वे धीरे-धीरे किसी गंभीर बीमारी की ओर जा रहे हैं। वे किसी पर भरोसा कर कुछ खरीदते हैं और मिलावटखोर इस भरोसे को तोड़ रहे हैं। उनकी वजह से दूसरे देशों का भी भरोसा भारतीय उत्पादों पर कम हो सकता है। अगर ऐसा हुआ तो इनके निर्यात से करोड़ों डॉलर की आमदनी पर आंच आएगी।

कड़ी सजा मिले | मिलावटखोरी पर लगाम न लगने की एक वजह यह भी है कि ऐसा करने वालों को लगता है, इससे होने वाले मुनाफे की तुलना में मिलने वाली सजा बहुत कम है। जाहिर है, सजा कड़ी करने के साथ ही यह भी पक्का करना होगा कि दोषी किसी तरह से बच न निकलें। यही नहीं, लोगों को पता होना चाहिए कि मिलावट की शिकायत कहां करनी है। हमारे प्रयासों में कमी न रहे, तभी यह काला धंधा रुक सकेगा।

धूप-छांव

यूं न मरें रिश्ते

प्रणव प्रियदर्शी

रिश्तों के अलग-अलग रूप देखने, समझने और महसूस करने के लिए भारत में पैदा होना ही काफी था। कम से कम हमारी पीढ़ी तक तो यही स्थिति रही। संयुक्त परिवार वाले उस माहौल में अपने आंगन और आसपास के घरों या पूरे एक गांव को ले लिया जाए तो रिश्ते का शायद ही कोई रूप नजरों से ओझल रह पाता होगा। जिनके मां-बाप रोजी-रोटी की तलाश में गांव से शहर आ चुके थे, वे भी छुट्टियों में या पर्व-त्योहार के मौके पर गांव जाते ही थे। न भी जाएं तो शहरों में प्रायः रिश्तेदारों का आना-जाना लगा रहता था। ऐसा चूंकि आसपास के सभी घरों-परिवारों में होता था तो तमाम रिश्तों से अनजान रह जाना लगभग नामुमकिन ही था।

आज की न्यूक्लियर फैमिली में पलते बच्चों के सीमित भाव संसार के लिहाज से कहूं तो मेरी नजर में वह वाकई बेहतर स्थिति थी। लेकिन उसका एक साइड इफेक्ट भी था। साइड इफेक्ट यह कि दुनिया को देखने की रिश्तों में बंटी दृष्टि ही स्वाभाविक लगने लगी। यानी जब कभी अपने चिर-परिचित दायरे से बाहर निकलना हो तब भी संपर्क में आने वाले लोगों को पूर्व परिभाषित रिश्तों के खांचे में डालकर देखना इस कदर सहज लगने लगा था कि उससे अलग कोई दृष्टि हो सकती है, इस संभावना की ओर भी नजर नहीं जाती थी। उदाहरण के लिए, अगर किसी परिचित के मां-पिता या चाचा-चाची, मामा-मामी वगैरह कोई मिलें या उस उम्र के किसी भी व्यक्ति से संपर्क हो तो उन्हें और कुछ नहीं तो अंकल या आंटी का दर्जा दे दिया। किसी परिचित की पत्नी अपने आप भाभी जी हो जाया करती थीं। हों भी क्यों ना। बचपन से देखा यही था कि लोग परिचय भी इसी तरह कराते थे- ये हमारा बेटा, ये बेटी और ये हमारी श्रीमती जी। वह स्वाभाविक इसलिए भी था कि ऐसे अवसर नहीं हुआ करते थे जब पारिवारिक दायरे से बाहर किसी का किसी से यूं ही मिलना हो। यानी आपकी पत्नी आपसे अलग स्वतंत्र रूप से किसी अनजान व्यक्ति से मिले, इसके मौके ना के बराबर होते थे। सो, उसका पूरा व्यक्तित्व ही जैसे फलां जी की पत्नी तक सीमित हो जाता था।

मगर बदले परिवेश से संपर्क ने बताया कि पत्नी हो या प्रेमिका, उसका परिचय एक स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में कराना ही सही तरीका है। आपकी या किसी की भी पत्नी या प्रेमिका होना उसका निजी मामला है। यही नहीं, वयस्कों के रिश्तों में उम्र को भी हद से ज्यादा अहमियत देना कई बार जीवन की संभावनाओं का गला घोट देता है। बराबरी का एक भावपूर्ण रिश्ता, किसी भी उम्र में कितना कुछ दे सकता है, जो यह जानता है वही समझ सकता है इस तरह जीवन की संभावनाओं का गला घोटा जाना कितना अफसोसनाक होता है।

बोल वचन

'अदहन देइया पैसेंजर'

राहुल पाण्डेय

मिट्टी के चूल्हे के दिनों की बात है। शाम के 5 बजे फैजाबाद-इलाहाबाद पैसेंजर चलती थी। चलती तो खैर अब भी है। तब यह 6 से 7 के बीच कूड़ेभार स्टेशन पहुंचने से पहले एक लंबी सीटी बजाती थी, क्योंकि पहले एक क्रॉसिंग पड़ती थी। सीटी तो क्रॉसिंग पर खड़ी बेचैन भीड़ के लिए बजती, मगर सावधान आसपास के दर्जनों गांवों की घरैतिनें होतीं। सीटी सुनते ही पहले आंगन, फिर चूल्हे में हलचल होती। भदेली पर अदहन चढ़ता। इन घरैतिनों ने इस रेल का नाम 'अदहन देइया पैसेंजर' रखा था। उधर, सैंया टेसन पर उतरें, इधर भदेली में अदहन खदकने को चढ़े। भदेली को हांडी समझिए और अदहन को भदेली में पानी उबलने की प्रक्रिया। एक बार अदहन खदक गया, फिर चाहे उसमें दाल पके, चाहे चावल चुरे (उबले)। ऐसा नहीं कि अदहन कोई आज से ही हमारी रसोइयों में खदक रहा है। अदहन तब से है, जब से इंसान ने चीजों को पानी में उबालकर खाना सीखा- लगभग 30 हजार साल पहले। अदहन खदक रहा है, इसे स्पेनिश में कहते हैं 'El agua est hirviendo (एल एग्वा एस्टा हिरविएंदो)। फ्रेंच में उबलने को bouillir कहते हैं। इंग्लिश में उबलने के लिए boiling शब्द है, मगर इन दिनों इसके लिए hot water ही ज्यादा फैशन में है। इंग्लिश हो, फ्रेंच या स्पेनिश, ये अदहन के पास इसलिए नहीं पहुंच पाते, क्योंकि संस्कृत से हमारी संस्कृति में आए इस शब्द का विच्छेद है- अ+दहन= जिसका दहन न हो सके। इंग्लिश तो दूर, हिंदी का उबलना भी इस अर्थ के करीब नहीं पहुंचता। उबलने में एक वेग है। अदहन इसी वेग को ऊर्जा में बदलता है।

Subrata Dhar

आग लगने की घटनाएं बढ़ने से हिमालय के ग्लेशियरों के पिघलने का जोखिम बढ़ता जा रहा है

पहाड़ में जंगलों की आग के हैं बड़े खतरे

महेश पांडेय

उत्तराखंड के जंगलों की बढ़ती आग बड़ी आपदा है। आग से ग्लेशियरों के तेजी से पिघलने का खतरा तो पैदा हो ही रहा है, पानी के प्राकृतिक स्रोत भी सूखने के कगार पर पहुंच रहे हैं। पर्यावरणविदों का मानना है कि अगर हालात ऐसे बने रहे तो कुछ सालों के भीतर ग्लेशियर खत्म हो सकते हैं। ऐसा हुआ तो यह अपने साथ अलग-अलग तरह के कितने भीषण संकट लेकर आएगा, इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है।

जंगली जानवरों की मुश्किलें | इस दावानल से जंगली जानवरों के भी वजूद पर बन आई है। इनमें से कुछ आग की भेंट चढ़ रहे हैं तो कुछ जान बचाने के लिए बस्तियों का रुख कर रहे हैं।

चीड़ के वन | आग लगने का प्रमुख कारण पहाड़ में चीड़ के जंगलों का होना माना जाता है। इनसे निकलने वाला 'लीसा' और उनके पत्तों के रूप में गिरा 'पिरूल' अत्यधिक ज्वलनशील होता है। गर्मी बढ़ने पर कई बार पत्थरों की आपसी टकराहट से निकली चिंगारी से भी जंगलों में आग पकड़ लेती है।

क्या है आशंका | उत्तराखंड के 13 जिलों में मार्च और अप्रैल में बारिश सामान्य से कम रेकॉर्ड की गई। पिथौरागढ़ जिले में तो इन दो महीनों में बारिश 53% कम हुई है। नैनीताल जिले में सामान्य से 37% कम बारिश रेकॉर्ड की गई। रुद्रप्रयाग में भी यह 32% कम रेकॉर्ड हुई। चंपावत जिले में 28% बारिश कम हुई। अल्मोड़ा में भी 22% कम बारिश हुई। बारिश की कमी के कारण नमी नहीं मिल पाने से जंगलों में आग की आशंका बढ़ गई है।

क्या हो रहा है असर

- सूखते जा रहे हैं पेय जल के स्रोत
- हिंसक पशुओं के आने का खतरा
- धुएं और धुंध से सेहत को नुकसान

चारधाम यात्रा पर असर | आग का प्रभाव चारधाम यात्रा पर न पड़े, यह आशंका यात्रा मार्ग के स्थानीय निवासियों और व्यापारियों को सताने लगी है। उनकी चिंता यह है कि पहाड़ों में आग की खबरों की वजह से तीर्थयात्री चारधाम यात्रा की बुकिंग कैंसल ना करवाने लगें। आग की खबरों से कुमाऊं के पर्यटन व्यवसाय को भी काफी नुकसान पहुंच रहा है। नैनीताल और आसपास के इलाकों में लगी आग से कई लोग बुकिंग करवाने से पहले होटल और टैक्सी व्यवसाय से जुड़े लोगों से अपडेट ले रहे हैं।

थम नहीं रहा सिलसिला | उत्तराखंड वन विभाग के आंकड़ों के मुताबिक, इस साल 3 मई तक राज्य में आग लगने की 804 घटनाएं हो चुकी थीं। नैनीताल वन प्रभाग, तराई पूर्वी वन प्रभाग, रानीखेत वन प्रभाग, टिहरी बांध प्रथम वन प्रभाग, भूमि संरक्षण अल्मोड़ा वन प्रभाग, रामनगर वन प्रभाग, सिविल सोयम अल्मोड़ा वन प्रभाग, मसूरी वन प्रभाग, लैंसडाउन भूमि संरक्षण वन प्रभाग, केदारनाथ वन्य जीव प्रभाग में लगातार आग लगने की घटनाएं हो रही हैं। कई पहाड़ी जिलों के बांज के मिश्रित जंगल भी आग की चपेट में हैं। इनके आसपास के पेयजल स्रोत सूख रहे हैं।

PTI

रुद्रप्रयाग जिले के सतेरखाल गांव के पास जंगल में 24 अप्रैल को लगी थी आग

विजिबिलिटी कम | जंगली आग के धुएं के चलते विजिबिलिटी की समस्या सभी पहाड़ी कस्बों में दिख रही है। इस बार कुमाऊं के जंगलों से उठी आग की लपटों को गढ़वाल वन क्षेत्र की तरफ फैलते हुए देखा जा रहा है। पिंडर घाटी के पश्चिमी पिंडर रेंज नारायणबगड़ के जंगलों में बड़े पैमाने पर दावानल भड़कने के कारण धुंध गहरी होने लगी है। धुंध का दुष्परिणाम लोगों को सिरदर्द, आंखों में जलन जैसी समस्या के रूप में भुगतना पड़ रहा है। पिंडर घाटी गहरी धुंध की चपेट में है। वहां स्थिति यह है कि धुएं के कारण 150 मीटर की दूरी पर भी कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा है।

फैल रहा है दायरा | उत्तराखंड मौसम केंद्र के हरीश थपलियाल के अनुसार, कुमाऊं क्षेत्र के जंगलों में लगी आग अब पूर्व पिंडर रेंज देवाल के ओडर, लिगंडी आदि के जंगलों को चपेट में ले रही है। वन विभाग के अधिकारी, कर्मचारी ग्रामीणों के सहयोग से इस दावानल पर नियंत्रण पाने के प्रयासों में जुटे हुए हैं। कुमाऊं का क्षेत्र खुला हुआ है, जबकि पिंडर के अधिकांश क्षेत्र घाटीनुमा हैं। कुमाऊं के जंगलों में लगी आग के कारण उठ रहा धुआं हवा के साथ पिंडर घाटी पहुंच रहा है, जिससे वहां भी गहरी धुंध छा गई है।

10 लाख का नुकसान | बागेश्वर तहसील के लाथी गांव में वनाग्नि से क्षेत्र का सबसे पुराना बंजैण मंदिर जलकर राख हो गया है। इस घटना में मंदिर में रखे सारे बर्तन भस्म हो गए हैं। इसके अलावा करीब छह तोला सोना भी आग की भेंट चढ़ गया है। ग्रामीणों ने बताया कि इस अग्निकांड में दस लाख रुपये का नुकसान हुआ है।

हाईकोर्ट का दखल | ध्यान रहे, उत्तराखंड के पर्वतीय जनपदों में आग लगने की घटनाओं से जुड़ा मामला वर्ष 2016 में हाईकोर्ट पहुंच गया था। इस मामले में हाईकोर्ट का रुख बेहद गंभीर था। कोर्ट ने शासन को जहां SDRF, NDRF तैनात करने के निर्देश दिए थे, वहीं 24 घंटे में आग नहीं बुझने पर DFO, 48 घंटे में वन संरक्षक और 72 घंटे में प्रमुख वन संरक्षक को सस्पेंड करने तक का आदेश दे दिया था। खैर, बाद में सुप्रीम कोर्ट ने इस आदेश को स्थगित किया। मगर आग से निपटने में प्रशासन की चुस्ती का सवाल अब भी बना हुआ है।

इलेक्शन में खीसा खाली नईं करने का भिड़ू

दीपक पाचपोर

मुलुक का भीतर भाई लोग लोकशाही का बात करके अपना बी टाइम खोटी करताए अऊर दूसरा का बी करेंगा। अईसाइच इलेक्शन का होताए। पेपर वाला, टीवी वाला सब जान गयेला कि पब्लिक का इंटरेस्ट बोले तो इसीच का मचमच में होताए। तुम अपना खोली का बाहेर बईठ के चा-पानी लेता रहेंगा तो कोई-कोई चैनल वाला छोकरा-छोकरी माइक कूं तुमारा थोबड़ा का नजीक लाके पूछेंगा कि तुमारा पसंत का उमेदवार कऊन होताए? कबी पूछेंगा कि तुमारा आमदार, नामदार सांसद, विधायक कोई काम कियेला कि नईं?

अरे बाबा, अबी कियेला कि नईं तुमकूं क्या बताएंगा! अपुन को कोई लफड़ा नईं मांगताए। अपुन का वास्ते अक्खा लोग झक्कास होताए। नगरसेवक, पार्षद, कार्पोरेटर जो बी बोलताए तुम उसकूं-कोई बी पूछेंगा तो अपुन बोलताए कि अच्छा काम किएलाए। अपुन उसी कूं वोट देंगा। कोई आके पूछेंगा कि अपुन कूं वोट कांएकूं नईं देताए, तो अपुन उसका आगे बी हात जोड़ के बोलेंगा- 'ओके, ब्रदर। अपुन इस बखत पक्का तुमकूं देंगा।' अबी तुम सोचता होएंगा कि अपुन पैला वाला को देंगा कि दूसरा वाला कूं- तो अपुन तुमकूं बताताए कि अपुन पैले वाला को बी वोट नईं देताए, दूसरा वाला कूं बी नईं। जो अपुन का पास नईं आताए उसकूं देताए।

अबी तुम पूछेंगा कि अईसा सॉलिड फार्मूला अपुन कूं कऊन टिकाएला, तबी बताएंगा कि अपुन का ग्रेट फ्रेंड, फिलासफर एंड गाइड बाबूराव दिएला। इसका सीक्रेट अईसाए भिड़ू, कि जो तुमारा पास बार-बार आताए मतलब वो जीतेंगा। जीतेंगा तो फिर बार-बार आयेंगा। इस करके अईसा कैंडिडेट को देने का कि तुमारा वोट लेके बी हारेंगा अऊर फिर पांच साल थोबड़ा नईं दिखाएंगा। अपुन पूछा- 'बाबूराव, अपुन अलीबाग से आएला क्या? तुमारा वोट का बिगर बी कोई जीतेंगा तबी तुम उसकूं अगला बखत आने से रोकने कूं सकताए क्या? नईं न? फिर तुम मगजमारी कांएकूं करताए?'

Ai Image

खाली पीली

बाबूराव- 'बॉस, भौत सा बखत पैलेइच पता चल जाताए कि कऊन जीतेंगा अऊर कऊन नईं जीतने कूं सकताए। पैला अऊर सेकंड पोजिशन वाला आईटम क्लीयर दिखताए। इस करके वो दोनों को वोट देने का नईं। कोई बी एकदम गरीब उमेदवार दिखताए, हारने का ग्यारंटी लेके उतरेला तबी उसकूं वोट देने का अऊर बोल के देने का। अईसा करेंगा तबी पैला अऊर दूसरा पोजिशन वाला तुमारा तरफ झांकने कूं बी नईं आयेंगा। तुम उसका पक्का सपोर्टर बताने का।'

अपुन पूछेला- 'अईसा कांएकूं?' बाबूराव- 'तुमकूं शांति से रैना मांगताएं कि नईं? कोई बी पार्टी का होन दो, कोई बी उमेदवार होन दो। तुम एकईच बोल बच्चन करने का कि, 'बाबा, तुम देरी से आएला। अबी अपुन उसकूं प्रॉमिस किएला।' वईसा बोल देने का अऊर उसकूं फूटने का वास्ते बोलने का। थोड़ा हवा आना मांगताए कि नईं? अबी वो तुमकूं अपना अपोजिशन वाला समझेंगा अऊर कबी बी उदर नईं आयेंगा। तुमारा बारे में जबी अक्खा लोग जान जाएंगा कि तुम इसका नईं तो उसका एकदम इस्पेशल होताए तबी अगला बखत से टोटल साइलेंट रहेंगा। लगे तो जूना उमेदवार का साथ का एक फोटो खोली का भीतर मेन जगा पे लटकाने का। कोई उमेदवार आयेंगा पतली गल्ली से निकल लेंगा। तुमारा चा-पानी थंडा-बिंडा का बी वेट नईं करेंगा।

भिड़ू, स्मार्ट बनने का! टाइम का साथ चा-नाष्टा का पईसा बचाने का। अंबी तुम एक को चा पिलाएंगा, उसका सामने दो-चार बिस्किट रहेंगा, थोड़ा नमकीन बी देंगा तबी वो अक्खा इलेक्शन तुमारा तरफ चा-नाष्टा करने का वास्ते आयेंगा। तुम जानताए कि अईसा लोग अकेला नईं आताए। चार पंटर बी लेके आयेंगा। वोट तुम जिसकूं देंगा वो देंगा। वो तुमारा मर्जी। कऊन जीतता है कऊन हारताए, इसका टेंशन नईं लेने का। अस्सल बात इत्ताईच होताए ब्रादर- खीसा खाली नईं करने का। पईसा आगे काम आएंगा।'

शेयर करें अपने अनुभव

आम मुंबइया भाषा में यह लेख कैसा लगा हमें बताएं **nbtreader@timesgroup.com** पर, और सब्जेक्ट में लिखें-**'खाली पीली'**

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

hindi.speakingtree.in

ईश्वर को समझने के लिए सोच को बड़ा करना होगा

स्वामी विवेकानंद

एक ही वृक्ष की अलग-अलग डालियों पर सुंदर पंखवाले दो पक्षी बैठे हैं। उनमें से एक ऊपर की डाल पर है, और दूसरा नीचे की डाल पर। नीचे का सुंदर पक्षी वृक्ष के मीठे और कड़वे फलों को खाता है। वह एक बार मीठे फल को, और उसके तुरंत बाद कड़वे फल को खाता है। कुछ क्षण के बाद वह महसूस करता है कि हर फल का स्वाद उसे कड़वा लगने लगा है। अचानक उसकी नजर ऊपर बैठे पक्षी पर पड़ती है। वह मीठे या कड़वे, किसी भी फल को नहीं खाता। वह अपने आप में मगन और धीर भाव से बैठा है। धीरे-धीरे नीचे वाला पक्षी ऊपर वाले पक्षी की ओर बढ़ने लगा। जब वह उसके एकदम निकट पहुंचता है, तब वह ऊपरवाले पक्षी के प्रभाव में आ जाता है। अब वह शांत, महिमामय और मुक्त हो जाता है।

पता चला कि असल में वृक्ष पर दो पक्षी कभी थे ही नहीं। वहां केवल एक ही पक्षी था। नीचे वाला पक्षी ऊपर वाले पक्षी की केवल छाया थी। इसी प्रकार वास्तव में हम ईश्वर से अभिन्न हैं। हम ईश्वर की ही छाया हैं। जिस प्रकार एक सूर्य ओस की लाखों बूंदों पर प्रतिबिंबित होकर छोटे-छोटे लाखों सूर्यों में दिखता है, उसी प्रकार ईश्वर भी बहु-जीवात्मरूप में प्रतिबिंबित होता है। इसलिए ईश्वर को समझने के लिए पहले सब संकीर्ण धारणाओं का त्याग करना होगा। प्रत्येक व्यक्ति में ईश्वर का दर्शन कीजिए। जब तक हमारी ऐसी अवस्था नहीं होती कि हम संसार में उस प्रभु के सिवाय और किसी को न देखें, तब तक हम दुख से घिरे रहेंगे। तब तक हम सब में भेद देखेंगे। जब तक हम ईश्वर को सर्वत्र नहीं देखेंगे, तब तक हम समग्र संसार के एकत्व का अनुभव नहीं कर सकेंगे।

सभी हमारे निकटवर्ती हैं। यही जानना धर्म है और प्रभु हम सबको यह विश्वास दें। हम जब समस्त संसार में इस अखंड का अनुभव करेंगे तब हम अमर हो जाएंगे। जितने दिन तक एक व्यक्ति भी इस संसार में सांस ले रहा है, तब तक मैं उसके भीतर जीवित हूं। अतीत में जितने प्राणी हुए, मैं उन सभी का जीवन स्वरूप था। मैं ही बुद्ध, ईसा और मोहम्मद साहब का स्वरूप हूं। मैं सर्वमय हूं। इसलिए उठो- यही परापूजा है।

यह आध्यात्मिक एकत्व के गहन अनुभव की ओर ले जाता है, जहां व्यक्तिगत अस्तित्व की सीमाएं विलीन हो जाती हैं और ईश्वर के साथ समस्त विश्व के साथ एकात्मता का बोध होता है। जब तक हम संसार में हर जगह ईश्वर को नहीं देख पाते, तब तक हम दुख और कष्ट से घिरे रहेंगे। यह भेदभाव और अलगाव की भावना ईश्वर के साथ हमारे एकत्व के बोध के अभाव से उत्पन्न होती है। हम और ईश्वर एक ही हैं। जब हम इस एकत्व का अनुभव करते हैं, तब हम न केवल अपने सीमित शरीर और मन से, बल्कि समस्त विश्व से एकाकार हो जाते हैं। हम अतीत और वर्तमान के सभी प्राणियों के साथ, सभी संतों और महापुरुषों के साथ एक हो जाते हैं। यही परम पूजा है, यही सच्चा विनय है, जहां हम अपने अस्तित्व की सीमाओं से परे जाकर ईश्वर और विश्व के साथ एकत्व का अनुभव करते हैं। यह एकत्व का बोध ही हमें सच्चा सुख, शांति और मुक्ति प्रदान करता है।

(साभार : 'मैं कौन हूं' पुस्तक)

पुरानी पिच पर बेहतर परफॉरमेंस की चुनौती

अल्पयू सिंह

कोलकाता में एक सड़क का नाम है मिर्जा गालिब स्ट्रीट। गालिब ने बंगाल को कमाल की धरती बताते हुए कहा था कि यहां के लोग सौ साल पीछे भी जाते हैं और सौ साल आगे भी। लोकसभा चुनावों की फिजा में बंगाल के लोगों के मन को पढ़ने और साधने की कोशिशें तृणमूल और BJP भी कर रही हैं। लेकिन कोलकाता की सड़कों से लेकर आसनसोल की गलियों तक चुनावी माहौल में वोटरों के ध्रुवीकरण का पैटर्न साफ दिख रहा है। बंगाल में मुस्लिम वोटरों की संख्या करीब 30% है। साल 2021 के विधानसभा चुनावों में ध्रुवीकरण की कोशिशों में नाकाम रही BJP इस बार इस दिशा में पूरा दम लगा रही है। वहीं, TMC की ओर से हो रहे चुनाव प्रचार के केंद्र में यही मुस्लिम वोट बैंक है, जो लेफ्ट- कांग्रेस गठबंधन के कमजोर होने के बाद पिछले विधानसभा चुनाव में पूरी तरह से TMC के पक्ष में गया था। जमीनी तौर पर भी हिंदू वोटों को अपनी ओर करने के लिए BJP ने पूरा जोर लगाया है।

कोलकाता, झारग्राम, दुर्गापुर और आसनसोल में बीते दिनों रामनवमी और हनुमान जयंती के मद्देनज़र खुले तौर पर धार्मिक पहचान को लेकर कार्यक्रम और झंडे-बैनरों की मौजूदगी जिस तरह से दिखाई दी, उसमें भले ही सामने VHP और बजरंग दल दिखाई दें, लेकिन यह लोकसभा चुनाव में BJP का वोट बैंक मजबूत करने की कोशिश है। राज्य में 125 विधानसभा क्षेत्र ऐसे हैं, जहां मुस्लिम आबादी 20% या उससे ज्यादा है। इनमें उत्तर और दक्षिण 24 परगना, नदिया, कोलकाता, बीरभूम और बर्धमान शामिल हैं। TMC का जोर अपने इस वोट बैंक को बनाए रखने पर है।

CAA पर मतुआ समाज में दो धड़े

राज्य में चुनावी हिंसा के बाद ध्रुवीकरण की राजनीति का एक पैटर्न साफ तौर से देखने को मिल रहा है। BJP की ओर से दिलीप घोष ने अपने बयान से जाहिर भी कर दिया था कि BJP को मुसलमान वोटों की जरूरत नहीं। ऐसे में दोनों ओर से ध्रुवीकरण की उसी पिच पर बैटिंग हो रही है, जो पिछले विधानसभा चुनाव के दौरान तैयार की गई थी। इस बार के चुनाव में मतुआ वोट बैंक को निर्णायक फैक्टर माना जा रहा है। नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA) के मुद्दे पर BJP ने साल 2019 में बनगांव और रानाघाट सीट पर कब्जा कर लिया था। पूर्वी बंगाल और अब बांग्लादेश से भारत आए इस समुदाय के लोग राज्य की आबादी का 15% हिस्सा हैं। पिछले चुनाव में BJP ने CAA को लेकर इस समुदाय से वादा किया था। यही वजह है कि चुनाव से ऐन पहले आनन-फानन में जिस तरह CAA को लागू किया गया, उसे सीधे तौर पर चुनावी वोट बैंक से जोड़कर देखा गया। हालांकि ऐसा करने पर भी 10 लोकसभा सीटों पर प्रभाव रखने वाले इस समुदाय का पूरा वोट BJP को जाएगा, यह कहना मुश्किल है। CAA के मुद्दे पर यह समुदाय दो हिस्सों में बंटा हुआ है। इन लोगों के पास आधार कार्ड और वोटर आईडी जैसे डॉक्युमेंट्स पहले से ही हैं। ऐसे में समुदाय का एक हिस्सा बिना शर्त नागरिकता की बात करता है, जिसे TMC अपने पक्ष में भुनाने की कोशिश कर रही है। पहले यह वोट बैंक दशकों तक लेफ्ट के साथ था। हालांकि बाद में ममता बनर्जी के साथ भी इनकी नजदीकी बढ़ी। महज बनगांव इलाके में ही मतुआ समुदाय के वोटर 65 से 67% हैं, जबकि कृष्णानगर, बर्दवान और मालदा जैसे जिलों में इनकी मौजूदगी अच्छी खासी है। इस समुदाय का महत्व क्या है, यह तो इसी बात से पता चल जाता है कि जब लोकसभा चुनाव की तारीखों का ऐलान नहीं हुआ था, उसी समय अमित शाह और ममता बनर्जी ने यहां सभाएं की थीं। BJP मान रही है कि उसे मतुआ समुदाय चुनाव में निराश नहीं करेगा, हालांकि TMC इन मतों का एकमुश्त BJP की झोली में जाने से रोकने के लिए रणनीति तैयार किए बैठी है।

विशुद्ध राजनीति

कसौटी

महिला वोटर क्यों हुए अहम

राज्य में तीन साल पहले हुए विधानसभा चुनाव के दौरान TMC ने अपने प्रचार को महिलाओं के मुद्दों के इर्द-गिर्द रखा था। TMC की ओर से 'बंगाल अपनी बेटी को चाहता है' का नारा भी दिया गया था। जीतने के बाद ममता सरकार ने लक्ष्मी भंडार और कन्याश्री जैसी योजनाएं शुरू की, जिन्हें जमीन पर अच्छा रेस्पॉन्स मिलता दिख रहा है। महिलाएं स्वीकारती हैं कि इन योजनाओं का अच्छा असर हुआ है। इस रणनीति को कायम रखते हुए इस बार TMC की ओर से आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की पारिश्रमिक राशि बढ़ाने का ऐलान किया गया है। BJP बंगाल में इस वोट बैंक की अहमियत समझती है। इसलिए उसके नेता संदेशखाली की घटना के जरिए ममता सरकार की छवि पर हमला कर महिला वोटरों को अपने पाले में लाने की कोशिश कर रहे हैं। खुद पीएम मोदी महिलाओं को अपना परिवार बता रहे हैं। वोटिंग पैटर्न के आधार पर कहा जाता है कि बंगाल में आम तौर पर महिलाएं परिवार के पीछे चलने के बजाय अपने हिसाब से वोट का फैसला करती हैं। ऐसे में इन मतदाताओं को अपने पक्ष में करने के लिए दोनों पार्टियां पूरी तरह से जोर लगा रही हैं।

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

■ रिश्ते न बिगड़ें

6 मई का संपादकीय 'हकीकत नहीं बदलेगी' पढ़ा। एक तरफ भारत-नेपाल के बीच सीमा विवाद का समाधान बातचीत से तलाशा जा रहा है तो दूसरी तरफ नेपाल सरकार ने विवादित क्षेत्रों को शामिल करने वाला नक्शा अपने नोट पर छापने का फैसला किया है। यह फैसला दोनों देशों के रिश्तों में तनाव बढ़ाने वाला है। हालांकि इसे लेकर नेपाल के अंदर भी सवाल उठ रहे हैं। दोनों देशों के बीच गहरे सामाजिक और सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। इसलिए प्रचंड सरकार के हठ के चलते ऐसा न हो कि समाधान के सारे रास्ते बंद हो जाएं। इस तरह की एकतरफा कार्रवाई रिश्तों में कड़वाहट लाती है। उम्मीद है कि दोनों देश इस मुद्दे पर संयम और समझदारी से काम लेंगे।

कौशिक रावत, ईमेल से

■ पारदर्शी हो राजनीति

यह पत्र 23 अप्रैल के 'खाली-पीली' कॉलम में छपे लेख 'देखने का, प्रॉब्लेम कऊन सा कैटिगरी मे गिरताए' से संबंधित है। लेख में व्यंग्य के माध्यम से राजनीति और जेल के बीच के जटिल संबंधों पर प्रकाश डाला गया है। बाबूराव अपने अनोखे अंदाज में बताता है कि नेताओं का एक-दूसरे को जेल भेजना फायदे का खेल है। क्या हम स्वच्छ और पारदर्शी राजनीतिक व्यवस्था की आशा कर सकते हैं।

धर्मेंद्र सिंह, नोएडा

■ डॉक्टरों की कमी

आजादी के बाद भी भारत में चिकित्सा सुविधाओं की कमी चिंताजनक है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिति और भी बदतर है। वहां बुनियादी चिकित्सा सुविधाओं और डॉक्टरों की भारी कमी है। छोटी-छोटी बीमारियों के लिए भी लोगों को शहरों का रुख करना पड़ता है, क्योंकि प्राथमिक और सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों में संसाधनों का अभाव है और ICU बिस्तरों की संख्या बिलकुल नहीं है। सरकार को गंभीरता से ध्यान देना चाहिए। डॉक्टरों की कमी को दूर करने के लिए मेडिकल कॉलेजों में सीटें बढ़ाने की जरूरत है।

अंकित सोनी, ईमेल से

nbtedit@timesgroup.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

पारा 41 डिग्री पार, सबसे गरम रहा रविवार- एक खबर

- कूलर-पंखा हुआ बेकार, एसी में ही मिले करार!

मोना वर्मा

आर.एन.आई. नं. 510/57© सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी वेनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद** और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 23302000 फैक्स: 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु. ; रविवार : नेपाली 6 रु.
संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी)

प्रवाह
महोत्सव विश्वास का 75
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

भविष्य उन्हीं का है, जो अपने सपनों की सुंदरता में विश्वास करते हैं। -एलेनोर रुजवेल्ट

दिल्ली समेत देश के विभिन्न हिस्सों में प्रचंड गर्मी जिस तरह से कहर बरपा रही है, उससे आम जन-जीवन प्रभावित हो रहा है। हाल के वर्षों में जिस तरह से जलवायु परिवर्तन का असर चरम मौसम के रूप में सामने आया है, उसमें गर्मी की शुरुआत में ही तापमान के 40 डिग्री पार कर लेने पर हैरत नहीं होती।

दिल्ली की गर्मी

देश भर में झुलसाती गर्मी के बीच राजधानी दिल्ली बेशक अप्रैल महीने में भौगोलिक वजहों से कुछ राहत में रही, लेकिन मई के पहले ही रविवार को यहां का तापमान 41 डिग्री सेल्सियस के पार पहुंच जाने से स्पष्ट है कि आने वाले दिनों में गर्मी का प्रकोप बढ़ने ही वाला है। दरअसल, हाल के वर्षों में जिस तरह से जलवायु परिवर्तन का असर चरम मौसम के रूप में सामने आया है, उसमें देश के अनेक हिस्सों में गर्मियों की शुरुआत में ही तापमान के 40 डिग्री सेल्सियस पार कर लेने पर हैरत नहीं होती। भारतीय मौसम विभाग के इस पूर्वानुमान के बावजूद कि इस साल अप्रैल से जून के मध्य देश के अधिकांश हिस्सों में तापमान सामान्य से अधिक रहेगा, अगर अप्रैल में दिल्ली में कुछ राहत रही, तो इसकी वजह इस दौरान आए पांच पश्चिमी विक्षोभ थे। लेकिन अब गर्मी दिल्ली समेत पूरे देश में कहर बरपा रही है। जैसा उत्तराखंड में हम देख ही रहे हैं, प्रचंड गर्मी से वनाग्नि की घटनाओं की आवृत्ति बढ़ रही है। ऐसे में, मौसम विभाग के अनुसार अगर आने वाले दिनों में राज्य के कुछ जिलों में बारिश होती है, तो इससे गर्मी से राहत तो मिलेगी ही, वनाग्नि पर भी काबू पाया जा सकेगा। लोकसभा चुनावों में मतदान प्रतिशत पर इस भीषण गर्मी का असर निर्वाचन आयोग के लिए पहले ही चुनौती बना हुआ है। मौसम विज्ञानियों के मुताबिक, आने वाले कुछ दिनों में तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, महाराष्ट्र और कर्नाटक के अलावा राजस्थान और मध्य प्रदेश में भी भीषण गर्मी हो सकती है। यही नहीं, उत्तर पश्चिम भारत में आने वाले हफ्तों में लू के आसार बढ़ रहे हैं, जिससे तापमान 44 से 45 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच सकता है। गर्मी के साथ सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि इससे सभी समान रूप से प्रभावित नहीं होते। सबसे ज्यादा परेशानी गरीब, मजदूर और उन वर्गों को होती है, जो निम्नतम सुविधाओं के साथ जिंदगी जीने को मजबूर हैं। चिलचिलाती गर्मी में गरीबों को राहत देने के लिए जोधपुर में एक

एनजीओ ने नगर निगम के सहयोग से एक कूलिंग स्टेशन स्थापित करने का जो प्रयोग किया है, वह उल्लेखनीय है। प्रचंड गर्मी से न केवल आम जन-जीवन प्रभावित होता है, बल्कि आर्थिक गतिविधियों पर भी इसका बुरा असर पड़ता है, क्योंकि हमारे श्रमबल का बड़ा हिस्सा असंगठित क्षेत्र में काम करता है। ऐसे में जहां व्यक्तिगत स्तर पर लोगों को गर्मी से राहत पाने के लिए सतर्कता बरतनी चाहिए, वहीं सरकारों को भी जगह-जगह पेयजल एवं छांव की व्यवस्था करनी चाहिए। जीडीपी में वृद्धि निस्संदेह महत्वपूर्ण है, लेकिन प्रचंड गर्मी से निपटने के प्रयासों में 'जोधपुर प्रयोग' जैसे संवेदनशील उपायों को शामिल किए जाने की जरूरत है।

अस्तित्व के संकट से गुजरती कांग्रेस

चुनावों के बीच बड़े पैमाने पर नेताओं का पार्टी छोड़ना और उम्मीदवारों का किसी न किसी बहाने चुनाव लड़ने से इन्कार करना कांग्रेस में व्यापक स्तर पर निराशा और अस्तित्व के संकट का संकेत देता है।

चुनावों के बीच बड़े पैमाने पर नेताओं का पार्टी छोड़ना और उम्मीदवारों का किसी न किसी बहाने लोकसभा चुनाव लड़ने से इन्कार करना कांग्रेस पार्टी में व्यापक स्तर पर निराशा और अस्तित्व के संकट का संकेत देता है। ऐसे में, अगर कांग्रेस पार्टी अपने दम पर 80-100 लोकसभा सीटों के आंकड़े को पार कर जाती है, तो यह तमाम प्रतिकूलताओं एवं धुंधले परिदृश्य के बीच कांग्रेस पार्टी को नया जीवन मिलने जैसा होगा।

आगामी चार जून को कांग्रेस अगर किसी भी तरह से भाजपा को 272 सीटों के बहुमत के आंकड़े से नीचे रखने में सफल हो जाती है, तो यह आगामी लड़ाई के लिए जिंदा रहेगी। कांग्रेस के खत्म होने का दावा करने वालों के लिए यह खबर होगी कि कांग्रेस अभी जिंदा है और पैर मार रही है।

रशीद किदवई
वरिष्ठ पत्रकार

कांग्रेस के संकटग्रस्त, लेकिन दृढ़ निश्चयी नेता राहुल गांधी के लिए दांव बहुत ऊंचे हैं। दो भारत जोड़ो यात्राओं और अपनी संसदीय सीट बरकरार रखने के लिए वायनाड से चुनाव लड़ने के बाद राहुल ने रायबरेली सीट से भी नामांकन दाखिल करके अपने दोस्त और दुश्मन-सबको हैरान कर दिया है। वह सभी राजनीतिक दलों से दो लोकसभा सीटों पर चुनाव लड़ने वाले एकमात्र महत्वपूर्ण नेता हैं। राहुल द्वारा अमेठी सीट से चुनाव नहीं लड़ने के बारे में काफी कुछ लिखा गया है, जहां से वह 2019 में चुनाव हार गए थे। ध्यान रखना चाहिए कि राहुल भाजपा प्रत्याशी और केंद्रीय मंत्री स्मृति ईरानी के खिलाफ चुनाव लड़कर अमेठी चुनाव को राहुल बनाम ईरानी नहीं बनने देना चाहते थे। चेतन और अवचेतन स्तर पर अब भी राहुल और कांग्रेस 2024 को राहुल बनाम नरेंद्र मोदी के रूप में देखते हैं।

बारीकी से जांच करने पर पता चलता है कि राहुल पर उत्तर प्रदेश से चुनाव लड़ने के लिए समाजवादी पार्टी का भारी दबाव था। उत्तर प्रदेश में 34 लोकसभा सीटें ऐसी हैं, जहां विपक्षी 'इंडिया' गठबंधन के

40 फीसदी से ज्यादा वोट हैं। दूसरे शब्दों में, इन सीटों पर कब्जा किया जा सकता है। क्या समाजवादी पार्टी-कांग्रेस गठबंधन ये 34 सीटें भाजपा के खाते में जाने से रोक सकता है?

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का रोड शो और अयोध्या के राम मंदिर का दौरा इस बात का संकेत है कि भाजपा राहुल एवं अखिलेश को खतरे के तौर पर देख रही है। हालांकि बसपा और मायावती उत्तर प्रदेश में भाजपा के लिए सबसे बड़ी राहत बनी हुई हैं। ऐसे में कल्पना कीजिए कि अगर बसपा का वोट शेयर तेजी से 'इंडिया' गठबंधन की ओर चला जाता है, तो भाजपा के लिए उत्तर प्रदेश में भारी संकट की स्थिति पैदा हो जाएगी।

राधिका खेड़ा, अरविंदर सिंह लवली, गौरव बल्लभ, रोहन गुप्ता, सुरेश पचौरी, अक्षय कांति बाम, वीरेंद्र सिंह और संजय निरुपम भले ही राजनीतिक दृष्टि से मजबूत नेता न दिखें, लेकिन इनमें एक समानता है। इनमें से कई नेताओं ने राम मंदिर और प्राण प्रतिष्ठा समारोह में शामिल होने से कांग्रेस के इन्कार का मुद्दा उठाया है। हालांकि सच्चाई यह थी कि कांग्रेस अपने नेताओं के अयोध्या जाने के विरोध में नहीं थी, बल्कि 22 जनवरी, 2024 को कमोबेश मोदी और भाजपा के साथ ही थी। अजय राय, दीपेंद्र हुड्डा और मंदिर जाने वाले अन्य लोगों को आखिर लोकसभा चुनाव के लिए पार्टी के टिकट दिए ही गए। असंतुष्टों और विद्रोहियों ने चुनाव के बीच में किसी न किसी बहाने से पार्टी छोड़ी है, जिससे कांग्रेस को शर्मिंदगी एवं बेचैनी का सामना करना पड़ा है। सूरत में भाजपा निर्विरोध चुनाव जीत गई, जबकि इंदौर, पुरी, अहमदाबाद पूर्व में भाजपा से मुकाबला करने के लिए कांग्रेस के पास योग्य उम्मीदवार नहीं है। यह असाधारण स्थिति है।

बहरहाल कांग्रेस के लिए अच्छी खबर यह है कि उसकी स्थिति इससे ज्यादा खराब नहीं हो सकती। वर्ष 1967, 1977, 1996, 1998-1999 की पराजय के विपरीत, 2014 और 2019 में हार के बावजूद पार्टी में कोई बिखराव नहीं हुआ और कांग्रेस से टूटकर कोई अलग पार्टी नहीं बनी। फिर भी समय-समय पर नेताओं द्वारा पार्टी छोड़ने से कांग्रेस को भारी नुकसान हुआ है। 1969 और 1978 की इंदिरा गांधी के विपरीत, मौजूदा कांग्रेस नेतृत्व को अपने राजनीतिक विरोधियों से मुकाबला करने के लिए फिर से संगठित होने या मजबूत संगठन बनाने का समय नहीं मिल रहा है। पार्टी में आंतरिक असंतोष खत्म होता नहीं दिख रहा और वंशवाद का आरोप सोनिया, राहुल एवं प्रियंका को कमजोर कर रहे हैं, जो खुद ही सत्ता की डोर संभाले हुए हैं, भले ही कांग्रेस पर नियंत्रण को इसकी वजह बताया जा रहा है।

सोनिया के नेतृत्व में कांग्रेस बदलाव से बचती रही। कांग्रेस शायद एकमात्र राजनीतिक पार्टी है, जहां 1970 के दशक के पार्टी नेता (संजय गांधी की फैक्टरी से निकले) 2014-2024 में भी पार्टी में पकड़ बनाए हुए हैं/थे। अशोक गहलोत, दिग्विजय सिंह, अंबिका सोनी, कमलनाथ, अहमद पटेल (नवंबर, 2020 में जिनका निधन हो गया) और अन्य लोग संजय युग में ही प्रमुखता से सामने आए थे। इनमें से ज्यादातर लोग पांच दशक से ज्यादा समय होने के बावजूद अब भी पार्टी में प्रासंगिक बने हुए हैं। ये लोग हमेशा संजय, राजीव, सोनिया के करीबी सहयोगियों में थे, जो केंद्रीय मंत्री और वरिष्ठ स्तर के एआईसीसी पदाधिकारियों के रूप में उभरे थे। वे छोटे-छोटे क्षत्रप थे, लेकिन निर्णय प्रक्रिया का प्रभावशाली हिस्सा थे। वास्तव में इसने राज्यों में संरक्षणवाद का विस्तार किया। वर्ष 2006 में एआईसीसी महासचिव बने राहुल गांधी ने बदलाव या सुधार की कोशिश की, पर जल्द ही उन्हें और उनकी टीम को गुलाम नबी आजाद (अब कांग्रेस से अलग) के वफादार लोगों (अहमद-अंबिका-दिग्विजय नेटवर्क) के भारी विरोध का सामना करना पड़ा। यहां तक कि युवा कांग्रेस, एनएसयूआई, सेवा दल और महिला कांग्रेस में भी राहुल के बदलाव लाने के प्रयास को काफी विरोध और प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। तब यूपीए सत्ता में थी और सोनिया एआईसीसी अध्यक्ष थीं, जिन्होंने 'सब चलता है' के दृष्टिकोण को प्रोत्साहित किया, जिसके चलते निराशा की भावना पैदा हुई। जब तक कांग्रेस की अगुआई वाला यूपीए गठबंधन सत्ता में था, सब कुछ दबा हुआ था। उसके बाद आलम यह है कि पिछले दस वर्षों में 15 पूर्व मुख्यमंत्री पार्टी छोड़ चुके हैं।

जीवन धारा

स्वेट मार्डेन

वह व्यक्ति सफलता की आशा भला कैसे कर सकता है, जो अपने भावी कल पर आज का भी बोझ लादता है अथवा जो अपने भविष्य को आज के काम का ऋणी बनाता है?

जरा भी समय बर्बाद मत होने दीजिए

कुछ लोगों को आज का काम कल पर टालने की बहुत बुरी आदत होती है। अनेक लोग समय की शुभता व अशुभता के फेर में पड़कर काम को टालते रहते हैं। ऐसा करके वे अपने अमूल्य समय को व्यर्थ ही नष्ट करते हैं। समय का दुरुपयोग करना बुद्धिमानी नहीं है। बहुत से लोग टालने की आदत, सुस्ती, आलस्य और ढीलेपन के कारण दुख पाते हैं। कार्य-शक्ति को नष्ट करने का इससे बड़ा कोई दूसरा दोष हो ही नहीं सकता। इससे व्यक्ति की क्रियान्वयन शक्ति क्षीण हो जाती है। वह सिर्फ सोचता ही रहता है, खयाली पुलाव पकाता रहता है, मगर सोचे हुए को क्रियान्वित नहीं कर पाता। इस दोष को दूर करने का एक ही संभव उपाय है कि आपके सामने जो काम उपस्थित है, उसे अभी आरंभ कीजिए। आप इस सत्य को समझिए कि बीतने वाले एक-एक क्षण के साथ आपका कार्य कठिन से कठिनतर होता जा रहा है।

आज के काम को कल पर मत टालो। इस प्रकार की आदत एक अपराध है, ज्यों ही काम का विचार आए, त्यों ही काम शुरू कर दें और तन-मन-धन से उसमें जुट जाएं। संभव है आपके सामने कठिन कार्य हो और आप उसमें असफल हो जाएं, परंतु यही तो आपकी परीक्षा की घड़ी है। काम को उसके सरल अंश से कभी आरंभ मत कीजिए। उसके सबसे कठिन अंश को पहले हाथ में लीजिए। कठोर अंश पर तुरंत काम शुरू कर दीजिए और जब तक उसमें सफलता न मिले, तब तक उसे निरंतर करते जाइए।

आज का काम कल पर टालने की आदत को अपना भयंकर शत्रु समझिए। यह आदत अवसर की शत्रु है। यह आपकी स्वतंत्रता की विनाशक है। यह आपको कामचोर और गुलाम बनाने वाली है। वह व्यक्ति सफलता की आशा भला कैसे कर सकता है, जो अपने भावी कल पर आज का भी बोझ लादता है, अथवा जो अपने भविष्य को आज के काम का ऋणी बनाता है? जो काम आज करना चाहिए वह कल पर छोड़कर आने वाले कल को आज के भार से बोझिल बना दिया जाता है। तब कल आपको अवश्य ही भार होगा।

जरा विचार कीजिए, आपको अमुक दिन अमुक गाड़ी से मुंबई जाना है। अगर आप देर से स्टेशन पहुंचे, तो फिर आपको वह गाड़ी उस दिन नहीं मिलेगी। निश्चित समय निकल जाने के बाद आप किसी दफ्तर में जाएं, तो आपका काम नहीं होगा। अपने काम और समय का इस तरह मेल रखें कि उसमें एक मिनट का भी अंतर न आए। तभी आप अपने समय का सदुपयोग कर सकेंगे।

आलस्य समय का सबसे बड़ा शत्रु है। यह कई रूपों में मनुष्य पर अपना अधिकार जमा लेता है। कई बार कुछ काम किया कि विश्राम के बहाने हम अपने समय को बर्बाद करने लगते हैं। वैसे बीमारी, तकलीफ आदि में विश्राम करना तो आलस्य नहीं है। नींद के लिए विश्राम करना भी बुरा नहीं है। थकावट हो नींद आए, तो तुरंत सो जाएं, लेकिन आंखें खुलने पर काम में लग जाएं।

उपयोगी कार्यों में खर्च करें...

समय बड़ा मूल्यवान है। उसे बड़ी कंजूसी से खर्च करना चाहिए।

सूत्र

जितना अपने समय-धन को बचाकर उसे आवश्यक उपयोगी कार्यों में लगाएंगे, उतनी ही आपके व्यक्तित्व की महत्ता एवं कीमत बढ़ती जाएगी। नियमित समय पर काम करने का अभ्यास डालें। इसकी आदत पड़ जाने पर आपको स्वयं ही इसमें बड़ा आनंद आने लगेगा।

दूसरा पहलू

प्राचीन काल में पशु और हमारे पूर्वज अकाल का भी अनुभव करते थे, इसलिए वे कम भोजन में भी जीवित रह सकते थे।

कम खाना यानी ज्यादा जीना?

अगर प्रयोगशाला के चूहे की कैलोरी में 30 से 40 फीसदी की कटौती कर दी जाए, तो उस चूहे की उम्र 30 फीसदी बढ़ जाएगी। हालांकि कैलोरी में यह कटौती इतनी भी नहीं होनी चाहिए कि चूहे को पोषण न मिल पाए, पर अगर कैलोरी कटौती सही हो, तो इससे चूहे में जैविक परिवर्तन आएगा। यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्सास के प्रोफेसर जेम्स नेल्सन कहते हैं कि कैलोरी कटौती से चूहों में विषैली चीजों के खिलाफ ज्यादा प्रतिरोधी क्षमता विकसित होती है और चोट लगने पर वे जल्दी ठीक हो जाते हैं।

इस संबंध में एक अध्ययन के तहत विस्कोन्सिन यूनिवर्सिटी ने पशुओं को दिन भर में एक बार भोजन देकर उनकी शारीरिक क्षमता मापी, जबकि नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एजिंग ने पशुओं को दिन भर में दो बार भोजन देकर उनकी शारीरिक स्थिति का अध्ययन किया। पता यह चला कि विस्कोन्सिन यूनिवर्सिटी के पशु ज्यादा दिन तक जिंदा रहे। वैज्ञानिकों के मुताबिक, कैलोरी कम लेने से उम्र बढ़ने के सिद्धांत को इस तथ्य से भी बल मिलता है कि चूहे या अन्य पशु मनुष्यों से कम बीमार होते हैं। वैज्ञानिकों ने 1930 के दशक में ही इस बारे में पहली बार पता लगा लिया था, और पिछले 90 वर्षों में कीड़ों से लेकर बंदरों तक में इस बारे में लगातार परीक्षण किए। हालांकि विशेषज्ञ अब भी इस पर बहस करते हैं कि कैलोरी में कटौती किस तरह काम करती है। इसका मतलब एकबारगी कैलोरी में कटौती करना है या फिर रुक-रुककर उपवास करना? हालांकि मनुष्यों की उम्र बढ़ाने या बुढ़ापे को बीमारी से मुक्त करने की दिशा में लंबे समय से शोध हो रहा है, पर इस दिशा में कोई शोध अभी निर्णायक नतीजे पर पहुंचा भी नहीं है कि कैलोरी में कटौती से मनुष्यों की भी उम्र बढ़ती है या नहीं।

डाना जी स्मिथ

कम कैलोरी चयापचय की गति धीमी कर देती है और इससे ज्यादा दिन जीना संभव हो सकता है। जैसे, गाड़ी की गति धीमी कर देने से टायर की उम्र बढ़ जाती है।

विशेषज्ञ कहते हैं कि कम कैलोरी लेने से हमारा शरीर कोशिकाओं के बीमार हिस्सों को खत्म कर उनका इस्तेमाल ऊर्जा के लिए करता है। यह कोशिकाओं के कामकाज में मदद करता है।

प्राचीन काल में पशु और हमारे पूर्वज अकाल का भी अनुभव करते थे, इसलिए वे कम भोजन में भी जीवित रह सकते थे। कम कैलोरी चयापचय की गति धीमी कर देती है और इससे ज्यादा दिन जीना संभव हो सकता है। इसे इस तरह समझा जा सकता है कि गाड़ी की गति धीमी कर देने से टायर की उम्र बढ़ जाती है। विशेषज्ञ कहते हैं कि कम कैलोरी लेने से हमारा शरीर कोशिकाओं के बीमार हिस्सों को खत्म कर देता है और उनका इस्तेमाल ऊर्जा के लिए करता है। यह कोशिकाओं के कामकाज बेहतर करने में मदद करता है और उम्र के कारण होने वाली बीमारियों के खतरे को भी कम करता है।

©The New York Times 2024

आंकड़े

दुनिया हमारी पाठशाला

पिछले कुछ वर्षों में चीन में भारतीय छात्रों की संख्या घटी है, लेकिन हमारे देश के छात्र दुनिया के अन्य देशों में उच्च शिक्षा के लिए जाते रहते हैं।

अमेरिका	1,90,512
कनाडा	1,85,955
ब्रिटेन	1,32,709
ऑस्ट्रेलिया	59,044
जर्मनी	20,684

(आंकड़े 2022 के) | स्रोत : Bol

जो घटना घट गई, हमें उसको लेकर ज्यादा परेशान नहीं होना चाहिए, क्योंकि जो भी होता है वह अच्छे के लिए होता है। हमें ईश्वर के प्रति सद्भावना रखनी चाहिए।

सब अच्छे के लिए होता है

अंतर्यात्रा
संकलित

एक गरीब व्यक्ति अकेला झोपड़ी में रहता था। उसके पास एक आम का पेड़ था, जिससे उसका खर्चा चलता था। एक दिन वहां से एक ऋषि और उनके शिष्य गुजर रहे थे। शाम हो गई थी। गुरु और शिष्य रात में ठहरने की जगह तलाश रहे थे। उस व्यक्ति ने अपनी झोपड़ी में इन दोनों को रहने के लिए जगह दे दी।

रात में गुरु ने शिष्य को जगाकर कहा कि तुम इसके आम का पेड़ को काट दो। शिष्य ने कहा, यही तो उसका एकमात्र आसरा है, आप उसे भी खत्म करना चाहते हैं? गुरु ने कहा, जैसा मैं कहता हूं, वैसा ही करो। शिष्य ने अंततः पेड़ काट दिया और दोनों वहां से चुपचाप चले गए। रास्ते में गुरु ने कहा, मैंने कुछ गलत नहीं किया है। यकीन न हो, तो साल भर बाद आकर तुम उसकी स्थिति देख लेना।

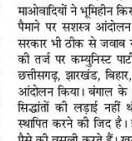

साल पूरा होने पर शिष्य ने वहां देखा कि झोपड़ी की जगह महलनुमा घर बना है। अंदर से वही आदमी निकला। उसने बताया कि आम का पेड़ कटने के बाद मैंने मेहनत करके जंगल की सफाई की। अब मैं खेती करके काफी धन कमा रहा हूं। अगर आम का पेड़ नहीं कटता, तो मैं उसी पर निर्भर रह जाता। जिसने भी पेड़ काटा, उसे मैं धन्यवाद देता हूं। शिष्य ने सारी बात गुरु को बताई, तो गुरु मुस्कराने लगे।

(अमर उजाला आर्काइव से)

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 31 मई, 1991

फिजी में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था सुरक्षा अध्यादेश जारी

फिजी की अंतरिम सरकार ने राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था सुरक्षा अध्यादेश जारी कर दिया है। इसका मूल उद्देश्य भारतीय मूल के फिजी किसानों द्वारा गन्ने की फसल कटाई के बहिष्कार पर काबू पाना है। वहां पिछले 14 हफ्ते से हड़ताल चल रही है।

माओवादियों के अंत की तैयारी

माओवादियों के खिलाफ हाल के दिनों में केंद्र को जो ऐतिहासिक कामयाबी मिली है, वह नक्सलवाद के विरुद्ध लड़ाई को मुकाम तक पहुंचाएगी।

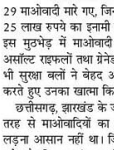

मधुरेन्द्र सिन्हा | **आंतरिक सुरक्षा**

हाल ही में छत्तीसगढ़ के जंगलों में सुरक्षा बलों से मुठभेड़ में हैरतअंगेज दृश्य सामने आया। कांकेर जिले में जबर्दस्त गोलीबारी में कुल 29 माओवादी मारे गए, जिनमें उनका सबसे बड़ा नेता 25 लाख रुपये का इनामी शंकर राव भी शामिल था। इस मुठभेड़ में माओवादी आधुनिक हथियारों जैसे, असॉल्ट राइफलों तथा ग्रेनेड लॉन्चरों से लैस थे। फिर भी सुरक्षा बलों ने बेहद आक्रामक ढंग से मुकाबला करते हुए उनका खात्मा किया।

छत्तीसगढ़, झारखंड के जंगलों के बड़े हिस्से में एक तरह से माओवादियों का राज था और वहां उनसे लड़ना आसान नहीं था। जिन लोगों ने छत्तीसगढ़ के घने और विस्तृत जंगल नहीं देखे हैं, उन्हें यह बताना जरूरी है कि वहां माओवादियों की चप्पे-चप्पे पर नजर रहती है और उनके कैडर हर जगह पहुंचे रहते हैं। उन्हें हथियारों का भी बेहतर प्रशिक्षण दिया जाता है और घात लगाकर हमला करने में उन्हें महारत हासिल है।

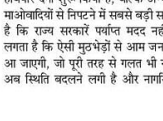

पिछले कुछ वर्षों से केंद्र सरकार ने माओवादियों पर लगाम कसनी शुरू कर दी है। गृह मंत्रालय ने इनसे निपटने के लिए सुरक्षा बलों को न केवल आधुनिकतम हथियार देना शुरू किया है, बल्कि अन्य संसाधन भी। माओवादियों से निपटने में सबसे बड़ी समस्या यह होती है कि राज्य सरकारें पर्याप्त मदद नहीं करतीं। उन्हें लगता है कि ऐसी मुठभेड़ों से आम जनता भी चपेट में आ जाएगी, जो पूरी तरह से गलत भी नहीं है। लेकिन अब स्थिति बदलने लगी है और नागरिकों की सुरक्षा और कल्याण पर ध्यान दिया जाने लगा है। इससे सरकार के प्रति जनता में अब कटता का भाव नहीं रहा है। उनकी सहानुभूति अब माओवादियों के साथ न होकर सुरक्षा बलों के साथ है।

ताजा मामले में, गृह मंत्रालय ने इन उग्रवादियों की गतिविधियों पर अपने स्रोतों से नजर रखी और जब सूचना बिल्कुल पक्की हो गई, तो राज्य के वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों के साथ मिलकर बीनागुंडा और आसपास के इलाकों में ऑपरेशन चलाया। दिन में चलाए गए इस ऑपरेशन का लाभ यह हुआ कि सुरक्षा बलों को सभी कुछ साफ दिख रहा था और वे उन पर हावी हो गये। और बड़ी संख्या में माओवादियों को जान से हाथ धोना पड़ा। सुरक्षा बलों की आक्रामकता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि अब तक चार महीने में लगभग 80 माओवादी मारे गए हैं और 125 से अधिक गिरफ्तार हुए हैं तथा 150 से अधिक ने आत्मसमर्पण किया है। यह केंद्र तथा राज्य सरकार के बीच सामंजस्य से संभव हुआ है। गृह मंत्रालय इस मामले में दृढ़ संकल्पित है कि माओवादियों से सख्ती से निपटना है, लेकिन बातचीत के रास्ते खुले हुए हैं।

माओवाद प्रभावित क्षेत्रों में 2019 के बाद से 250 से भी ज्यादा सुरक्षा शिविर स्थापित किए गए हैं। इन माओवादियों के कारण राज्य का विकास रुक रहा है और जन जीवन प्रभावित हो रहा है। बस्तर जिले के सीधे-सादे आदिवासियों को डराकर ये माओवादी उनके बच्चों तक को अपने साथ ले जाते हैं और उन्हें कम उम्र से ही हथियारों की ट्रेनिंग देते हैं।

साठ के दशक के उत्तरार्ध में बंगाल के नक्सलबाड़ी गांव से नक्सलवाद आंदोलन की शुरुआत हुई, जहां माओवादियों ने भूमिहीन किसानों के साथ मिलकर बड़े पैमाने पर सशस्त्र आंदोलन किया, जिसका वहां की सरकार भी ठीक से जवाब नहीं दे पाई। इसी आंदोलन की तर्ज पर कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी लेनिन) ने छत्तीसगढ़, झारखंड, बिहार, ओडिशा आदि में हिंसक आंदोलन किया। बंगाल के आंदोलन के विपरीत यहां सिद्धांतों की लड़ाई नहीं थी, बल्कि अपना वर्चस्व स्थापित करने की जिद है। इन माओवादियों के कैडर पैसे की वसूली करते हैं। खनन कार्य में लगी कंपनियों से मोटी रकम वसूली जा रही है। लेकिन अब समय बदलने लगा है और केंद्र सरकार माओवादियों से निपटने के लिए कमर कस चुकी है।

छत्तीसगढ़ सरकार ने केंद्र के साथ मिलकर नक्सल प्रभावित जिलों के लिए नई योजनाएं भी बनाई हैं। इसके तहत उन्हें 25 से अधिक मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध कराई जा रही हैं। प्रधानमंत्री आवास योजना के तहत ग्रामीणों को आवास उपलब्ध कराने की बड़ी योजना पर काम हो रहा है। इस तरह के कल्याणकारी कार्यों से ग्रामीण माओवादियों से दूरी बनाने लगे हैं। हालांकि इस तरह के प्रयासों के कार्यान्वयन में वक्त लगेगा, लेकिन इस दिशा में यह एक बड़ी पहल है।

edit@amarujala.com

संपादकीय जागरण

मंगलवार, 7 मई, 2024 : वैशाख कृष्ण-14 वि. 2081

कोई भी लक्ष्य मनुष्य की क्षमता से परे नहीं

घोटालों में डूबा झारखंड

भ्रष्टाचार किस तरह भयावह रूप में अपनी जड़ें जमाए हुए है, इसका हैरान करने वाला उदाहरण है झारखंड में ग्रामीण विकास मंत्री आलमगीर आलम के निजी सचिव संजीव कुमार लाल के नौकर जहांगीर के यहां से 25 करोड़ से अधिक रुपये की बरामदगी। यह तो ईडी यानी प्रवर्तन निदेशालय ही बताएगा कि जहांगीर और उसके निशाने पर आए अन्य लोगों के पास इतनी बड़ी रकम कहां से आई, लेकिन कोई भी समझ सकता है कि उसका स्रोत कांग्रेस कोटे के मंत्री महोदय और उनके निजी सचिव हो सकते हैं। हालांकि मंत्री जी निजी सचिव पर दोष मढ़कर खुद को पाक-साफ बता रहे हैं, लेकिन इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि करीब एक वर्ष पहले टेंडर घोटाले की जांच के क्रम में ग्रामीण विकास विभाग के मुख्य अभियंता वीरेंद्र राम के पास सौ करोड़ से अधिक की संपत्ति पाई गई थी। गत दिवस इसी घोटाले के सिलसिले में छापेमारी की गई। झारखंड की गिनती देश के गरीब राज्यों में होती है, लेकिन वहां के भ्रष्ट नेता और नौकरशाह उसे दोनों हाथों से लूटने में लगे हुए हैं। खुद पूर्व मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन जमीन घोटाले को अंजाम देने के आरोप में जेल में हैं। इस घोटाले में ईडी अब तक करीब ढाई सौ करोड़ रुपये की संपत्ति जब्त कर चुकी है। एक अन्य पूर्व मुख्यमंत्री मधु कोड़ा भी भ्रष्टाचार के आरोप में जेल जा चुके हैं। बहुत समय नहीं हुआ, जब झारखंड में कांग्रेस सांसद धीरज साहू के यहां से आयकर विभाग ने साढ़े तीन सौ करोड़ रुपये की नकदी बरामद की थी।

झारखंड किस तरह घोटाला बहुल राज्य बन गया है, इसका पता इससे चलता है कि यहां के कई घोटालों की जांच ईडी कर रही है। इनमें मनरेगा घोटाला भी है। इस घोटाले की जांच के दौरान आइएएस पूजा सिंघल के पति के सीए के यहां से 20 करोड़ की नकदी मिली थी। झारखंड में शराब घोटाला भी अंजाम दिया जा चुका है। इस घोटाले में भी नेता, नौकरशाह और कारोबारी जांच का सामना कर रहे हैं। झारखंड का कोयला घोटाला भी चर्चा में रहा है। खनिज संपदा से संपन्न झारखंड गरीब बना हुआ है तो अनगिनत घोटालों के कारण भी। चूंकि घोटाले भ्रष्ट नेताओं और नौकरशाहों की मिलीभगत से हो रहे हैं, इसलिए इस नतीजे पर पहुंचने के अलावा उपाय नहीं कि उन पर कोई लगाम नहीं लग पा रही है। यह समस्या केवल झारखंड तक ही सीमित नहीं है। पड़ोसी राज्य बंगाल समेत अन्य राज्यों में भी नेता, नौकरशाह और उनके करीबी भ्रष्ट तौर-तरीकों से करोड़ों की लूट करने में लगे हुए हैं। इससे संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता कि ईडी या फिर सीबीआइ उन तक पहुंच जाती है, क्योंकि घोटाले थम नहीं रहे और घोटालेबाजों को समय रहते ऐसी सजा नहीं मिल रही कि भ्रष्ट तत्वों में भय पैदा हो।

योग्य शिक्षकों की नियुक्ति

'अयोग्यों से पढ़ रहे विद्यार्थियों की दुर्दशा, ऐसे शिक्षकों को बाहर करे सरकार', पंजाब एवं हरियाणा हाई कोर्ट की यह टिप्पणी राज्यभर के कालेजों में शिक्षण व्यवस्था पर बड़ा सवाल है। सरकार और उच्चतर शिक्षा विभाग की कार्यप्रणाली का यह कड़वा सच भी है कि प्रदेश के कालेजों में खाली पड़े हजारों पदों को भरने के बजाय एक्सटेंशन लेक्चरर से विद्यार्थियों को पढ़वाया जा रहा है। स्कूल हों या कालेज दक्षता और योग्यता की शर्तों को पूरा करने वाले शिक्षक ही नियुक्त किए जाने चाहिए। पढ़ाने वाला जितना दक्ष होगा, उतना ही विद्यार्थी अच्छी शिक्षा ग्रहण कर पाएंगे। उच्च न्यायालय ने जो प्रश्न उठाए हैं, उनका विभागीय अधिकारियों के पास जवाब नहीं है। इस व्यवस्था में भ्रष्टाचार भी हो सकता है, क्योंकि यूजीसी की ओर से बनाए गए नियमों की पूरी तरह अनदेखी की गई।

> स्कूल हों या कालेज दक्षता और योग्यता की शर्तों को पूरा करने वाले शिक्षक ही नियुक्त किए जाने चाहिए

बड़ा सवाल यह भी है कि जब राष्ट्रीय पात्रता परीक्षा (नेट) या पीएचडी की योग्यता अनिवार्य है तो इससे कम योग्यता रखने वालों को शिक्षण कार्य में क्यों लगाया गया? उच्च न्यायालय का यह कहना बिल्कुल सही है कि किसी भी हाल में शिक्षण कार्य में कोताही नहीं होनी चाहिए। पद खाली होने पर स्थायी नियुक्ति छह महीने में कर ली जाए। उम्र में उन्हीं एक्सटेंशन लेक्चरर को छूट दी जानी चाहिए, जो निर्धारित योग्यता को पूरा करने में सक्षम हों। अधिकारियों को इस आदेश को सबक के रूप में लेते हुए शिक्षा के स्तर पर सुधार करने के लिए ईमानदारी से प्रयास किए जाने चाहिए। इसके लिए कड़े कदम उठाने की जरूरत पड़े तो पीछे नहीं हटना चाहिए। सक्षम शिक्षकों से उच्च शिक्षा ग्रहण करने के बाद युवाओं को भविष्य की तैयारी करने में आसानी रहेगी। वे रोजगार के लिए प्रतियोगी परीक्षा के लिए शैक्षणिक और मानसिक रूप से तैयार होंगे।

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या सुनील गावस्कर का विराट कोहली पर नाराज होना सही है?

आज का सवाल

क्या कनाडा सरकार जानबूझकर खालिस्तानी अतिवादियों को संरक्षण दे रही है?

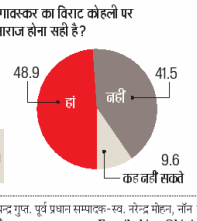

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।
सभी आंकड़े प्रतिशत में।

लाइलाज हुई दलबदल की बीमारी

राज कुमार सिंह

दलबदल भले सांसद-विधायक करते हों, मगर वह पार्टी आलाकमान की सहमति एवं सहयोग के बिना नहीं होता

पता नहीं सत्ता-स्वार्थ केंद्रित वर्तमान राजनीति में पूर्व उपराष्ट्रपति एम. वेंकैया नायडू की आवाज सुनी जाएगी या नहीं। हाल में उन्होंने दो बड़ी राजनीतिक विकृतियों की ओर ध्यान दिलाया। पहली, दलबदल और दूसरी, रेवड़ियों की राजनीति। यहां दलबदल की पड़ताल करते हैं। लोकतंत्र में अपेक्षा की जाती है कि नीति, सिद्धांत और कार्यक्रम यानी विचारधारा के आधार पर दल बनें और उसी आधार पर लोग उनसे जुड़ें भी, मगर क्या ऐसा हो रहा है? जैसा कि नायडू ने कहा कि लोग अक्सर दल बदलते हैं, सुबह एक दल में होते हैं तो शाम को दूसरे दल में। वे अपने नेता की आलोचना करते हैं, उनमें से कुछ टिकट के इच्छुक होते हैं। नायडू की टिप्पणी अतिरंजित लग सकती है, किंतु ऐसे उदाहरण तो हैं। हरियाणा के दशकों पुराने आयाराम-गयाराम प्रकरण के बाद भी ऐसे उदाहरण मिल जाएंगे। नायडू असल में उस पीढ़ी के नेता हैं, जिसमें राजनीतिक मर्यादा के दर्शन होते थे। इसीलिए वह दलबदल कानून की मजबूती की सलाह देकर अपेक्षा करते हैं कि दलबदल करने वालों को सांसद-विधायक पद भी त्याग देने चाहिए। दलबदल भले सांसद-विधायक या अन्य नेता करते हों, मगर वह पार्टी आलाकमान की सहमति एवं सहयोग के बिना नहीं होता। तब आप दलबदल कानून को मजबूत बनाने की उम्मीद और पद त्याग जैसी नैतिकता की अपेक्षा किससे कर रहे हैं? दलबदल को प्रोत्साहन देने वालों से या विधायी सदनों में पहुंचने वाले दलबदलुओं से?

दलबदल की बीमारी नई नहीं है, लेकिन पिछले कुछ दशकों में यह नासूर बन गई है। चुनाव से पहले तो यह खेल इतने बड़े स्तर पर खेला जाता है कि आम नागरिक के लिए हिसाब रख पाना भी मुश्किल हो जाए कि कौन-कौन कहां से कहां चला गया। राजस्थान की चूरू सीट से निवर्तमान सांसद राहुल कस्वां इसलिए कांग्रेस के टिकट पर चुनाव लड़ रहे हैं, क्योंकि भाजपा ने इस बार उनके बजाय पैरालिंपियन देवेंद्र झांझड़िया को टिकट दे दिया। ऐसी और भी तमाम मिसालें हैं। किसी को टिकट देने या किसी का टिकट काटने के कारण सार्वजनिक रूप से बताने की स्वस्थ परंपरा देश में नहीं है। जब दलों में आंतरिक लोकतंत्र ही संदेह के घेरे में हो, तब ऐसी आदर्श परंपराओं की अपेक्षा भी तर्कसम्मत नहीं लगती, लेकिन टिकट न मिलने पर धुर वैचारिक विरोधी दल से चुनाव लड़ना राजनीतिक महत्वाकांक्षा और अवसरवादिता के अलावा क्या कहा जा सकता है? विडंबना है कि 2024 के लोकसभा चुनाव में भी ऐसे दलबदल का यह इकलौता उदाहरण नहीं। बलिदानी सैनिकों की विधवाओं के लिए बनाई गई आदर्श हाउसिंग सोसायटी में घोटालों के चलते अशोक चह्वाण को महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा देना पड़ा था।

भाजपा की सदस्यता ग्रहण करने के बाद दिल्ली कांग्रेस के नेता ● एएनआइ

वही चह्वाण पिछले दिनों कांग्रेस छोड़कर भाजपा में आ गए। वह लोकसभा चुनाव तो नहीं लड़ रहे, लेकिन राज्यसभा सदस्य बना दिए जाने के बाद भाजपा के लिए प्रचार कर रहे हैं। पूर्व केंद्रीय मंत्री मिलिंद देवड़ा और पूर्व सांसद संजय निरुपम ने भी ऐसा ही किया। दोनों लोकसभा टिकट के तलबगार रहे, लेकिन गठबंधन में हुए सीट बंटवारे में उनकी सीटें कांग्रेस को छोड़नी पड़ीं। निरुपम शिवसेना से कांग्रेस में आए थे, लेकिन देवड़ा तो खानदानी कांग्रेसी थे। भाजपा नेता धैर्यशील मोहिते पाटिल का धैर्य भी टिकट न मिलने पर जवाब दे गया और वह शरद पवार की एनसीपी में शामिल हो गये। खनिज संपदा समृद्ध झारखंड राजनीतिक अस्थिरता के लिए कुख्यात है। एक निर्दलीय विधायक के मुख्यमंत्री बन जाने का गजब उदाहरण भी वहीं का है। उसी राज्य में सत्तारूढ़ झारखंड मुक्ति मोर्चा के प्रमुख शिबू सोरेन की बड़ी पुत्रवधू सीता सोरेन भाजपा में शामिल हो गईं। शिबू के छोटे बेटे हेमंत ने कुछ समय पहले ही भ्रष्टाचार के आरोप में गिरफ्तारी से पहले इस्तीफा देकर चम्पाई सोरेन को मुख्यमंत्री बनाया था। सीता का दलबदल सोरेन परिवार में चल रहे सत्ता संघर्ष का नतीजा है। इसका वैचारिक राजनीति से कुछ भी लेना-देना नहीं। सत्ता के लिए परिवार छोड़ने वाले क्या किसी दल के सगे हो सकते हैं?

भाजपा से कांग्रेस में आए नवजोत सिंह सिद्धू की राहुल और प्रियंका गांधी से निकटता के चलते पंजाब में सुनील जाखड़ को प्रदेश अध्यक्ष और कैप्टन अमरिंदर सिंह को मुख्यमंत्री पद से अपमानजनक तरीके से हटना पड़ा। उनकी नाराजगी समझी जा सकती है। दोनों का भाजपा में चले जाना भी समझा जा सकता है। अमरिंदर की सांसद पत्नी परनीत कौर को कांग्रेस ने पहले ही अनुशासनहीनता में निलंबित कर दिया था, लेकिन पंजाब में आतंकवाद के विरुद्ध संघर्ष के नायक रहे दिवंगत कांग्रेसी मुख्यमंत्री बेअंत सिंह के पोते सांसद रवनीत सिंह बिट्टू के अचानक भाजपा में शामिल होने को कैसे समझा जाए? यही सवाल सुशील कुमार रिंकू के मामले में उठता है। मूलतः कांग्रेसी रिंकू जालंधर लोकसभा उपचुनाव आप के टिकट पर जीते थे, मगर अब भाजपा के टिकट पर लड़ रहे हैं। भाजपा पंजाब में इस बार अकेले लोकसभा चुनाव लड़ रही है। शायद इसलिए अन्य दलों से 'जिताऊ' उम्मीदवार जुटाने का दबाव हो, जैसा कि 2014 में हरियाणा में नजर आया था। ऐसे में उन निष्ठावान नेताओं-कार्यकर्ताओं का क्या होगा, जो दशकों से पार्टी के झंडे-बैनर उठाते रहे?

मुक्केबाज विजेंदर सिंह का मामला और भी दिलचस्प है। 2019 में कांग्रेस के टिकट पर दक्षिण दिल्ली से लोकसभा चुनाव हारे विजेंदर राहुल गांधी के ट्वीट (पोस्ट) को रिट्वीट (रीपोस्ट) कर सोए और अगले दिन भाजपा में शामिल हो गए। उत्तर प्रदेश में पिछले लोकसभा चुनाव में सपा से गठबंधन में बसपा के जो दस सांसद जीते थे, उनमें से ज्यादातर ने इस बार नया ठिकाना खोजा है। उन्हीं में से भाजपा में शामिल हुए रितेश पांडे को ठीक चुनाव से पहले अहसास हुआ कि बसपा में उन्हें नजरअंदाज किया जा रहा। ऐसे अंतहीन उदाहरण राजनीति में नैतिक मूल्यों के पतन पर शाब्दिक चिंता जताने वाले दलों और नेताओं को कठघरे में खड़ा करते हैं। ऐसे में दलबदल पर अंकुश की उन्हीं से अपेक्षा चरम आशावाद और आदर्शवाद लगता है। दलबदल अभी भी हो रहे हैं। यदि चुनाव के अंतिम चरण के प्रत्याशी घोषित होने तक दलबदल का सिलसिला कायम रहे तो हैरानी नहीं। समय आ गया है कि लोकतंत्र का मखौल बनने से बचाने के लिए दलबदलुओं को सबक सिखाना भी जरूरी है। इसका दारोमदार मतदाताओं पर भी है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

असुरक्षा बोध जगाने वाली राजनीति

बद्री नारायण

संविधान, लोकतंत्र और आरक्षण के लिए खतरे की बातें लोगों को भयभीत करने के उद्देश्य से की जा रही हैं

विश्व के किसी भी जनतंत्र की परिपक्वता का एक मानदंड उसकी राजनीति में होने वाली बहस भी है। राजनीतिक बहसें चुनावी समय में तेज एवं मुखर हो जाती हैं। अभी मतदान के दो चरण हुए हैं। तीसरे चरण का मतदान आज है। चुनाव प्रचार आगे बढ़ने के साथ राजनीतिक विषयों पर बहस और तेज होगी। राजनीतिक बहसों में जनतंत्र की एक बानगी दिखती है। जनतंत्र में राजनीतिक बहसें दो तरह की होती हैं-एक तो प्रगतिकामी और दूसरी, पारंपरिक अस्मिताओं की गोलबंदी बढ़ाने वाली। जब संसदीय चुनावों का प्रचार प्रारंभ हुआ तो विकास, भविष्य के भारत की संकल्पना, एक भारत-श्रेष्ठ भारत तथा समाज कल्याण की नीतियों को भाजपा ने अपने राजनीतिक विमर्श का विषय बनाया। पार्टी का संकल्प पत्र भी इन्हीं बिंदुओं को लेकर गढ़ा गया। पार्टी ने अपने चुनाव अभियान में भविष्य की दृष्टि से बहस सृजित करने की कोशिश की। उसने पारंपरिक विभाजनकारी जातीय अस्मिताओं को राजनीतिक बहसों में आने से रोकने की भी कोशिश की, लेकिन इसी बीच कांग्रेस और उसके सहयोगी दल अपने चुनाव प्रचार में आक्रामक ढंग से जातीय गोलबंदी कायम करने में जुट गए। इसके लिए एक तो जातीय जनगणना का लोकलुभावनवादी नारा उछाला गया। इसके साथ ही संविधान एवं आरक्षण पर खतरे को प्रचारित कर एक भय का भाव सृजित किया जाने लगा। इसके जरिये यह माहौल बनाया जाने लगा कि यदि भाजपा इस बार जीत गई तो फिर आगे कभी चुनाव नहीं होंगे, देश में अधिनायकवाद आ जाएगा, संविधान बदल दिया जाएगा और आरक्षण खत्म कर दिया जाएगा। इस तरह भाजपा की ओर से छेड़ी गई बहस को आशंका, भय, चिंता की जंजीरों से बांध दिया गया।

भाजपा ने प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी समेत अपने अन्य नेताओं की ओर से बार-बार यह स्पष्ट किया कि संविधान एवं आरक्षण को न छुएंगे और न किसी को छूने देंगे। कांग्रेस को जवाब देने के क्रम में भाजपा ने संपत्ति के पुनर्वितरण का मुद्दा उछालकर उसे निशाने पर लेना भी शुरू कर दिया। संविधान, लोकतंत्र और आरक्षण को खत्म करने को लेकर जो आरोप-प्रत्यारोप शुरू हुए, उनसे राजनीतिक बहस लौटकर जातीय राजनीति की बेड़ियों में उलझ गई, क्योंकि एक असुरक्षा बोध रचकर उसे

एक रैली में संविधान की प्रति लिए राहुल ● एएनआइ

राजनीतिक गोलबंदी के तत्व के रूप में विकसित कर दिया गया। यदि कांग्रेस के चुनावी विमर्श का मूल्यांकन करें तो स्पष्ट होगा कि वह एक अनजाना एवं आधारहीन भय रचकर 'भयभीत सामाजिक मानस' रचना चाहती है और फिर उस मानस को अपने पक्ष में गोलबंद करना चाहती है। यह भय आज मध्य वर्ग, दलित एवं अल्पसंख्यक समुदाय में फैलाया जा रहा है। यह भय ही चिंता में बदलता है और असुरक्षा बोध पर आधारित गोलबंदी का स्वरूप ग्रहण कर लेता है। इस प्रक्रिया में अपने विरोधी को जनतांत्रिक मूल्यों के लिए खतरा एवं अपने को उसका रक्षक बता समर्थन सृजित किया जाता है। हालांकि असुरक्षा बोध पर आधारित यह राजनीति भारतीय जनता के लिए नई नहीं है। अनेक राजनीतिक दल समय-समय पर इसका इस्तेमाल करते रहे हैं। कांग्रेस पर सेक्युलरवाद के आवरण के तहत असुरक्षा बोध पर आधारित अल्पसंख्यक मतों की गोलबंदी का आरोप लगता ही रहा है।

भय एवं असुरक्षा बोध आधारित गोलबंदी फासीवादी राजनीति की महत्वपूर्ण रणनीति मानी जाती है। यह समझना मुश्किल है कि किस परिस्थिति के कारण कांग्रेस भयादोहन की राजनीति में फंसती जा रही है। संविधान पर खतरा प्रचारित करने की राजनीति मध्य वर्ग एवं दलित-पिछड़ों में यह भय पैदा करने के लिए की जा रही है कि इससे आपके अनेक अधिकार छीन लिए जाएंगे। दलित एवं पिछड़े सामाजिक समूहों में एक भय मिश्रित दीर्घकालिक चिंता भी फैलाई जा रही है कि इससे आपका आरक्षण छीन लिया जाएगा। यह वही पद्धति है, जो अल्पसंख्यकों में अस्मितापरक भय रचकर उनमें चुनावी गोलबंदी के लिए इस्तेमाल की जाती थी। अब यही हथियार दलित एवं पिछड़े वर्गों की गोलबंदी के लिए इस्तेमाल हो रहा है। हालांकि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक मोहन भागवत समेत आरएसएस के कई नेताओं ने भी आरक्षण को लेकर अपने पक्ष को बार-बार स्पष्ट किया है, लेकिन संघ और भाजपा को आरक्षण विरोधी साबित करने की कोशिश जारी है। मोहन भागवत ने कई बार कहा है कि भारतीय समाज में जब तक भेदभाव है, आरक्षण चलना चाहिए। फिर भी कांग्रेस ने संघ को अमूर्त भय सृजित करने के प्रतीक के रूप में विकसित कर लिया है।

वैसे तो अल्पसंख्यकों को अपने पक्ष में गोलबंद करने की राजनीति कांग्रेसी रणनीति का लंबे समय से हिस्सा रही है, मगर अब वह अपनी इस राजनीति का विस्तार दलित एवं पिछड़ों के बीच भी करने की कोशिश कर रही है। कांग्रेस और कुछ अन्य दलों के विमर्शकारों ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को एक अमूर्त अवधारणा में तब्दील कर दिया है। वे हर उस व्यक्ति, नीति, संस्था, संस्था प्रमुख, लेखक, विचारक, कुलपति, न्यायाधीश को आसानी से 'संघी' कह खारिज कर देते हैं, जिनके विचारों से सहमत नहीं होते। यह यही बताता है कि अपने देश में राजनीतिक विमर्श कैसे गढ़े जाते हैं और कैसे मुद्दों में घालमेल किया जाता है। भारतीय जनतंत्र एक परिपक्व स्तर पर पहुंच चुका है। एक अग्रगामी देश गढ़ने की दिशा में हम आगे बढ़ रहे हैं। ऐसे में यह जरूरी है कि हमारी राजनीतिक बहसें भी परिपक्व एवं भविष्यगामी हों। अभी संसदीय चुनाव के चार चरण बाकी हैं। देखना यह है कि आने वाले दिनों में राजनीतिक बहस क्या रूप-स्वरूप लेती है? यह ध्यान रहे कि स्वस्थ लोकतंत्र के लिए स्वस्थ राजनीतिक बहस आवश्यक होती हैं।

(लेखक गोविंद बल्लभ पंत सोशल साइंस इंस्टीट्यूट, प्रयागराज के निदेशक हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

विस्मृति

ईश्वर को परमपिता कहा जाता है। कभी-कभी हम अपने दुखों से इतने पीड़ित हो जाते हैं कि परमपिता परमेश्वर पर ही पक्षपाती होने का आरोप लगा बैठते हैं। तनिक विचार करके देखिए कि क्या पिता कभी भी अपनी संतान को कष्ट में देख सकता है? ईश्वर की दयालुता का सबसे बड़ा प्रमाण है-विस्मृति। हम चेतन या अचेतन अवस्था में सदैव जाग्रत रहना चाहते हैं। हमें हर क्षण हमारे आसपास क्या हो रहा है, उसके प्रति सतर्क रहने की, उसे याद रखने की आदत बन गई है।

प्रकृति ने निद्रा और मृत्यु का नियम बनाया है। निद्रा में जाते ही हम दिन की अधिकांश घटनाओं को भूल जाते हैं। अगले दिन मात्र बहुत ही महत्वपूर्ण या मन पर छाप छोड़ने वाली बातें याद रहती हैं। इसी प्रकार मृत्यु जो कालनिद्रा है, वह हमें जीवन भर की घटनाओं को भूल जाने का वरदान देती है। यही प्रकृति हमें कभी भी भविष्य के विषय में नहीं बताती और न ही अतीत की सभी बातों को याद रखने देती है। हमें जो थोड़ी सी स्मृति रखने की अनुमति प्रकृति से मिली है, उसी से हमने अपने जीवन को अधिक कष्टमय बना रखा है। कुछ लोगों को अपने दुख से इतना लगाव होता है कि वे उससे एक क्षण भी निकलना ही नहीं चाहते।

स्मृतियां ही दुख का कारण हैं। हृदय में एक शूल गड़ा हो तो राजसी पलंग पर मलमल की चादर ओढ़कर भी नींद कहां आती है? ईश्वर यदि हमें कष्ट देना चाहते तो सबसे पहले ऐसा विधान बना देते कि हमें सब कुछ याद रहे। विचार कीजिए कि हम अपने वर्तमान के कष्टों से इतने दुखी हैं तो सभी जन्मों की बातों को याद करके कितने अधिक दुखी होते। ग्लानि और पश्चाताप के बोझ तले हम इतना दब जाते कि अवसाद के दलदल में ही धंसे रहते। थोड़ी सी अवधि के लिए मिली हुई स्मृति से ही हमने तमाम तानेबाने बुनकर जीवन को जालों में उलझा लिया है। जबकि सकारात्मक होकर आगे बढ़ने का एक ही मंत्र है-बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुधि लेइ।

ट्विंकल तोमर सिंह

पाठकनामा

pathaknama@hir.jagran.com

कायम रहेगी कांग्रेस की दुविधा

'राहुल के अमेठी छोड़ने का मतलब' शीर्षक से लिखे आलेख में उमेश चतुर्वेदी ने एक राजनीतिक फैसले के बहुआयामी पक्षों का परीक्षण किया है। कांग्रेस भले ही इसे अपना मास्टरस्ट्रोक कह रही हो, लेकिन राहुल गांधी का अमेठी के बजाय रायबरेली से चुनाव लड़ना एक रक्षात्मक दांव ही कहा जाएगा। इसमें देश की सबसे पुरानी पार्टी और फिलहाल उसके अघोषित सर्वेसर्वा में आत्मविश्वास का अभाव ही झलकता है। लेखक महोदय का यह अनुमान भी खासा तार्किक है कि वायनाड और रायबरेली दोनों सीटों से जीत भी राहुल गांधी और कांग्रेस की दुविधा बढ़ाने का काम करेगी। केरल के आगामी विधानसभा चुनाव में कांग्रेस की संभावनाएं स्वाभाविक रूप से बेहतर नजर आ रही हैं, क्योंकि इस दक्षिणी राज्य में कांग्रेस और वाम दलों को बारी-बारी से सत्ता सौंपने का एक लंबा सिलसिला रहा है और इस बार तो वाम दलों को दस साल के सत्ता विरोधी रुझान का सामना करना पड़ेगा। ऐसे में यदि राहुल उस वायनाड को छोड़ते हैं, जिसने पिछली बार अमेठी में हार के बावजूद उन्हें लोकसभा तक पहुंचाया तो यह राज्य में कांग्रेस की संभावनाओं को कमजोर करने का काम करेगी। वहीं, यदि रायबरेली छोड़ते हैं तो राजनीतिक रूप से सबसे महत्वपूर्ण उत्तर प्रदेश में कांग्रेस के कायाकल्प की बची-खुची उम्मीदें भी जाती रहेंगी। दोनों ही सीटों पर उपचुनाव में भी कांग्रेस को मुश्किलों का सामना करना पड़ सकता है। बेहतर होता कि राहुल एक ही सीट से चुनाव लड़ते।

केशव तिवारी, आजमगढ़

राहुल गांधी का तर्कहीन फैसला

उमेश चतुर्वेदी का आलेख 'राहुल के अमेठी छोड़ने का मतलब' अत्यंत सटीक है। नामांकन दाखिल करने के आखिरी दिन राहुल गांधी ने अमेठी छोड़कर रायबरेली से पर्चा भरा। इससे न केवल जनता, अपितु अमेठी व रायबरेली के कांग्रेस नेता व कार्यकर्ता भी हतप्रभ हो गए। कुछ कांग्रेस नेता इसे राहुल गांधी का मास्टर स्ट्रोक तक कह रहे हैं। जयराम रमेश तो राहुल गांधी को राजनीति का मंजा हुआ खिलाड़ी बता रहे हैं। निष्पक्ष विवेचना की जाए तो राहुल गांधी का अमेठी से रायबरेली जाना सही दिशा में कदम नहीं है। अमेठी में राहुल गांधी हार भी जाते तो भी पार्टी की इतनी किरकिरी न होती, जितनी अमेठी छोड़कर हुई है। वायनाड से राहुल गांधी की जीत की संभावना है, जीत का अंतर कम हो सकता है। इसलिए सांसद तो वह बन ही जाएंगे। लेकिन गांधी परिवार जिस अमेठी से 1980 से 2019 तक चुनाव लड़ता आया और एक-दो अवसरों को छोड़कर जीतता भी रहा, उसी अमेठी को ऐसे छोड़कर अन्यत्र चुनाव लड़ना कांग्रेस के लिए हानिकारक और भाजपा के लिए लाभकारी संदेश दे रहा है। इस फैसले से पार्टी की अंदरूनी खींचतान, फैसले लेने में देरी और कारगर रणनीति की कमी ही दिख रही है। भाजपा इस मुद्दे को लपक कर पहले ही हमलावर हो चुकी है। इस तर्कहीन फैसले के दुष्परिणाम कांग्रेस के साथ साथ उत्तर प्रदेश में सहयोगी दल सपा को भी भुगतने पड़ेंगे। रायबरेली से राहुल गांधी जीत भी जाएं तो भी अमेठी छोड़ने के गलत फैसले की क्षतिपूर्ति नहीं हो सकती। राहुल गांधी भाजपा के अतिरिक्त एकमात्र राष्ट्रीय दल कांग्रेस के सर्वेसर्वा हैं। उन्हें हर कदम वरिष्ठ कांग्रेसियों से सलाह मशविरा करके, सोच समझ कर उठाना चाहिए।

सीपी बंसल, दिल्ली

आतंकवाद के खिलाफ हो बड़ा आपरेशन

फिर सिर उठाते आतंकी आलेख में देश की आंतरिक सुरक्षा को ठेस पहुंचाने के प्रयासों पर सख्ती पर बल दिया है। पुंछ में वायु सेना दल पर हमला सिर्फ चुनाव के दौरान अस्थिरता पैदा करने के लिए किया गया है। हालांकि एक हद तक आतंकवाद की इस भीषण समस्या को हमारे सुरक्षा बलों और सेना ने काबू में कर लिया है लेकिन पाकिस्तान के नापाक इरादे कभी समाप्त नहीं होते और वह रह-रहकर भारत के आंतरिक माहौल को बिगड़ने की हर संभव कोशिश करता रहता है। बिना किसी स्थानीय नागरिक की मदद के कोई भी आतंकी संगठन अपने नापाक इरादों को अंजाम नहीं दे सकता है और पुंछ वाले हमले में भी ऐसा ही हुआ होगा। आलेख में बिल्कुल उचित लिखा है कि आपरेशन सर्प विनाश जैसी ही कोई कारवाई हमारे सैन्य दलों को जल्द करनी होगी ताकि जंगलों और गुफाओं का फायदा उठाकर आतंकी घुसपैठ न करते रहें। पुंछ हमले में शामिल आतंकियों को उनके किए की सजा जल्द मिलनी चाहिए और जिन-जिन स्थानीय नागरिकों ने उनकी मदद की है, उनको भी सजा मिलनी चाहिए। इस दुखद घटना के बाद कांग्रेस इस पर अपनी राजनीतिक रोटियां सेंकने से बाज नहीं आई है। शर्मनाक है कि पंजाब के पूर्व मुख्यमंत्री चरणजीत सिंह चन्नी ने इसे भाजपा का चुनावी स्टंट बताकर वायु सेना के सैनिक के बलिदान का मजाक उड़ाया है। घायल सैनिकों को लेकर भी उन्होंने संवेदना नहीं दिखाई। इसके लिए कांग्रेस को माफी मांगनी चाहिए।

बाल गोविंद, नोएडा

पोस्ट

भारत की संविधान सभा में बनी सहमतियां इस देश की नींव की ईंट हैं। राष्ट्र की बुनियाद की ईंटों में यह बात शामिल है कि धर्म के आधार पर आरक्षण नहीं होगा, क्योंकि देश धर्म के आधार पर एक बार टूट चुका था।

दिलीप मंडल@Profdilipmandal

अनंत सिंह पेरोल पर जेल से बाहर आए और स्वागत में जिस तरह की भीड़ दिखी, दरअसल यही बिहार का दुर्भाग्य है। अपराधियों में अपना आदर्श ढूंढ़ने वाला बिहारी, बिहार के इतिहास का सिर्फ गुणगान गा सकता है, भविष्य को चौपट ही करता रहेगा।

अनुरंजन झा@anuranjanj

सादिक खान फिर लंदन के मेयर चुने गए। शहर में हिंसा और अपराध के मामलों में भारी बढ़ोतरी के बावजूद उनका चुनाव यही दर्शाता है कि लोग अपने हितों के विरुद्ध किस प्रकार मतदान करते हैं।

अभिजीत अय्यर मित्रा@Iyervval

पंजाब में मानसिक रूप से कमजोर 19 साल के किशोर की पीट-पीट कर हत्या कर दी गई। पुलिस पिटाई करते दिख रहे लोगों को गिरफ्तार करने के बजाय किशोर की मौत का जिक्र किए बगैर उसके ही खिलाफ बेअदबी का मामला दर्ज कर लेती है। इस पर कोई एनजीओ, कोई दल कुछ नहीं कहता।

मिहिर झा@MihirkJha

जनपथ

मत देना भगवान तुम रेवन्ना सा वंश,
जो दे दे परिवार को बदनामी का दंश।
बदनामी का दंश करें क्या देवेगौड़ा,
जो चलते थे आज तलक कर सीना चौड़ा।
करे नाव में छेद पड़े खुद को ही खेना,
हे प्रभु ऐसा वंश किसी को भी मत देना।

– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान सम्पादक-स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: राहुल मित्तल द्वारा प्लाट नं. 15, इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली रोड, हिसार से मुद्रित एवं प्रकाशित, सम्पादक (हरियाणा) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*, दूरभाष : 01662-282900, E-mail : hisar@hir.jagran.com -पं.सं. HARHIN/2007/22609 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद हिसार न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 17 अंक 343

****